

भाषा विभाग, पंजाब के सहयोग से

बन्धन टूटे न

वृज मानसी

1991



आत्माराम एण्ड संस

दिल्ली-6  लखनऊ

BANDHAN TOOTE NA (Drama)
by Brij Mansi

प्रकाशक : आत्माराम एण्ड संस
कश्मीरी गेट, दिल्ली 110006

शाखा : 17, अशोक मार्ग, लखनऊ

मूल्य . 55.00 (पचपन रुपये)

प्रथम संस्करण : 1991

मुद्रक : प्रेम प्रिंटर्स द्वारा शान प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-110032

समर्पित पूज्य देवस्वरूप माता-पिता जी को
जो मेरा आदर्श और निरन्तर
प्रेरणा-स्रोत है !

पात्र-परिचय



मुख्य पात्र

शांतिस्वरूप	:	मुख्य पात्र, नायक (मास्टर जी)।
श्यामसुन्दर	:	शांतिस्वरूप का छोटा भाई।
मुंशी ठाकुरदास	:	शांतिस्वरूप के पिता।
शकुन्तला देवी	:	ठाकुरदास की पत्नी (शांतिस्वरूप की माँ)।
शास्त्री विष्णुदत्त	:	ठाकुरदास का समधी (मणि के पिता)।
कृष्णदेव	:	ठाकुरदास का दूसरा समधी (सुशीला के पिता)।
सुशीला	:	नायिका (शांतिस्वरूप की पत्नी)।
मणि	:	श्यामसुन्दर की पत्नी।

दृश्य एक

[एक छोटा-सा गाँव। आसपास खेत, पेड़ और पौधे। पर्दा खुलते ही गाँव के एक घर मे कोलाहल (शोर) लड़ाई-झगड़े का दृश्य। घर और आस-पड़ोस के इकट्ठे हुए लोगों की आवाजें। मुख्य आवाजो में एक औरत के रोने और चिल्लाने की तथा एक पुरुष की धमकियों-भरी आवाज में कुछ अस्पष्ट कहने की।

शान्तिस्वरूप (मुख्य पात्र) जो साधारण वस्त्र कुर्ता-पाजामा पहने हुए है, पाँव मे चप्पल तथा कन्धे से कपड़े का एक थैला लटकाए हुए गाँव के बाहर खेतों के रास्ते से अपने गाँव, जो इस गाँव के पास ही है जा रहा है। अचानक उस घर से आते शोर व झगड़े की आवाज सुनकर अपने घर के रास्ते को छोड़कर उस घर की तरफ लम्बे-लम्बे कदमों से आगे बढ़ता है। आसपास के खेतों मे काम कर रहे लोगों से उस शोर का कारण पूछता है। किसी को भी बात का पता नहीं होता। वे लोग भी बात का पता लगाने शान्तिस्वरूप के साथ उस घर की तरफ आगे बढते हैं। कुछ ही देर मे सब वहाँ पहुँच जाते है और प्रश्नसूचक नजरो से वहाँ इकट्ठे लोगों को देखते है।]

पुरुष की आवाज (गुस्से मे): मैं तेरी आज टाँग तोड़ दूँगा। तू गई कैसे इस घर से बाहर ? किससे पूछकर गई थी तू बदजात ? हैं ! बता। किससे पूछकर गई थी ? (डंडे से टाँगो पर मारता है।)

औरत की आवाज : (मार को रोकती हुई) मत मारो मुझे। मैं अपनी
(रोते हुए) मर्जी से नहीं गई थी। तुम्हारे अम्मा-बापू से पूछ कर गई थी तुम्हारी बहन के साथ, ताई और बड़ी बुआ के साथ।

पुरुष : मगर मुझसे क्यों नहीं पूछा तूने ? मैं मर गया था क्या ?

स्त्री : (क्रोध-भरे लहजे में) कहाँ जाती तुमको पूछने ? दारूखाने में ? पता है तुमको, आज चार दिनों बाद लौटे हो तुम दारूखाने से ?

पुरुष : (आग-बबूला होते हुए) हरामजादी, तू कौन होती है मुझे टोकने वाली ? मैं जहाँ मर्जी आऊँ-जाऊँ, तुझे किसने हक दिया मुझसे ऐसे हिसाब माँगने का ? (पीटता है, औरत फिर चीखती है) ये जो सात हाथ जुबान खुल गई है न तेरी, खींच के बाहर न कर दी तो मैं भी मर्द का बच्चा नहीं। खबरदार तूने अब आगे एक भी शब्द मुँह से निकाला तो।

[ऊपर वाले वार्तालाप के समय ही शान्तिस्वरूप और दूसरे लोग वहाँ पहुँच जाते हैं। बाकी किनारे खड़े होकर तमाशा देखते हैं, मगर शान्तिस्वरूप आगे बढ़कर पुरुष का हाथ पकड़ कर आगे मारने से रोकता है। इतने में ही दूसरी तरफ से शान्तिस्वरूप का छोटा भाई श्यामसुन्दर भी अपने जैसे ही कुछ दो-तीन आवारा किस्म के लड़कों के साथ वहाँ घटनास्थल पर पहुँच जाता है।]

शान्तिस्वरूप : क्यों मार रहे हो इस तरह भाभी को परमानन्द भाई ? (छुड़ाता है और उसे एक तरफ ले जाकर बिठा देता है।)

श्यामसुन्दर : (भीड़ में आगे बढ़कर) क्या हुआ ? क्या बात है ?

कोई लड़ाई-झगड़ा हुआ है क्या ?

परमानन्द : झगड़ा नही तो और- कोई मेला लगा हुआ है यहाँ जो तुम भी देखने आए हो ?

[श्यामसुन्दर व साथी आपस में खुसर-फुसर करते हैं।]

श्यामसुन्दर : तो क्या भाभी ने पिटाई की तुम्हारी परमानन्द ?

परमानन्द : (गुस्से में खड़े होकर) क्या कहा ? ये पिटाई करेगी मेरी ? यह तो किस्मत अच्छी थी इसकी जो तुम्हारे भाई ने इसको आज बचा लिया, नही तो इसको पता चल जाता आज मरद जात क्या होती है। मगर सुन ले कान खोलकर। (अपनी पत्नी की तरफ गुस्से से आगे बढ़ते हुए) आगे से तूने घर के बाहर कदम रखा तो टाँगें तोड़ दूँगा। समझी ?

शान्तिस्वरूप : (बीच में ही उसे समझाते हुए) शान्त हो जाओ। आखिर बात क्या है, कुछ बताओगे भी ?

परमानन्द : बात क्या होनी है ? ये औरतें हैं न बेलगाम घोड़ी की तरह···

शान्तिस्वरूप : (उसके मुंह पर हाथ रखते हुए) ऐसे अपशब्द कहना अच्छा नहीं लगता परमानन्द ! आखिर ऐसा क्या हो गया ?

श्यामसुन्दर : हाँ-हाँ बताओ यार। (अपने दोस्तों की तरफ धीरे से—'मामला कुछ गड़बड़ लगता है।' सब एक-दूसरे को देखकर मुस्कराते हैं।)

शान्तिस्वरूप : चलो कोई बात नही। नही बताना चाहते तो न बताओ, मगर शान्त हो जाओ अब। अधिक गुस्सा सेहत के लिए अच्छा नहीं होता।

परमानन्द : तुम कहते हो मैं शान्त हो जाऊँ ? घर की औरतें मेला देखने जाएँ और मैं मरद का बच्चा यहाँ शान्त होकर बैठा रहूँ ! कोई लाज-शर्म है इनको ?

श्यामसुन्दर : (चुस्की लेते हुए) तो भाभी मेले मे गई थी। अब समझ में आया। (परमानन्द की तरफ चिढ़ाने वाली नजर से देखते हुए) मारकण्ड के मेले मे ?

परमानन्द : (खीझते हुए) हाँ ! हाँ ! मारकण्ड के मेले मे।

श्यामसुन्दर : पर मुझे तो भाभी वहाँ मिली नही। मैं भी अपने दोस्तों (दोस्तों के कन्धों पर गर्व से हाथ रखते हुए) के साथ कल सारा दिन मेले में ही था। (शरारतपूर्ण लहजे में) मिल जाती तो साथ इकट्ठे बैठकर भाभी के साथ हिंडोला ही झूल लेते।

शान्तिस्वरूप : (बीच में ही गुस्से से टोकते हुए) श्याम, चुप करो और हटो यहाँ से। चुपचाप घर चलो। मैं भी आ रहा हूँ। (परमानन्द की ओर मुड़ते हुए, समझाने के स्वर में) तो क्या हो गया भाई अगर भाभी दूसरी औरतो के साथ-साथ कही एक बार भूल से बाहर घूमने चली गई !

परमानन्द : घूमने चली गई ? मेले में ? आज मेला देखने गई, कल···

भाभी : (जो अब तक चुप बैठी थी, श्यामसुन्दर को अपने पक्ष में बोलते हुए देखकर हिम्मत करके बोलती है) नही। मैं मेला देखने नहीं गई थी।

परमानन्द : मेला देखने नही गई थी तो क्या गंगा-स्नान करने गई थी ?

भाभी : (थोड़ी और हिम्मत जुटा कर बोलते हुए) हाँ ! गंगा-स्नान करने ही गई थी। निपूती हूँ न ! सात लड़कियों की माँ। (रुँधी हुई आवाज में) तुम, तुम्हारे घर वाले, रिश्तेदार सब मुझे ही जिम्मेदार समझते हैं, केवल बेटियाँ पैदा करने के लिए। ठीक है (लगभग रोते हुए) मुझ मे ही खोट है। तभी

तो गई थी कल वैशाखी के दिन कि शायद भाग्य से मारकण्ड में वैशाखी के दिन नहाने से मेरे भी बेटा पैदा हो जाए और मेरा यह कलंक मिट जाए कि मैं निपूती हूं। (जोर-जोर से रोती है।)

शान्तिस्वरूप : (परमानन्द की तीन छोटी-छोटी लड़कियां भी मां से लिपट कर रोती हैं। शान्तिस्वरूप बच्चों को चुप कराता है व भाभी को भी चुप हो जाने के लिए कहता है।) चुप हो जाओ भाभी और इन बच्चियों को भी चुप कराओ।

भाभी : क्या चुप हो जाओ और कैसे चुप कराऊं ? हम औरतों का तो भाग्य ही रोना है। मशीन की तरह दिन-रात घर का, जमीन का काम करो, सबकी सेवा करो, फिर भी ऊपर से गालियां, फटकार और रोज किसी-न-किसी बहाने मार सहते रहो।

परमानन्द : हां ! हां ! मैं पागल जो हूं न, जो तुझे यूं ही मारता हूं।

शान्तिस्वरूप : (परमानन्द के पास आकर बड़ी शान्ति से समझाते हुए) नहीं भैया, तुम पागल नहीं हो। मगर यह जो क्रोध है न हमारे अन्दर यही मनुष्य को पागल बना देता है और हम बिना सोचे-समझे अत्याचार कर बैठते हैं, जिसमें होता क्या है, अपने घर का नुकसान और दूसरों के लिए तमाशा।

परमानन्द : पर तुम्हीं बताओ, क्रोध कैसे नहीं आएगा यदि घर की औरतें इस तरह घर से बाहर जाएं ?

शान्तिस्वरूप : इसमें बुरा मानने, क्रोध करने की बात ही क्या है ? अगर आदमी हाट-बाजार जाकर गप-शप मारे, दोस्तों के साथ ताश-जुआ खेले, रात को दारू भी पीए, घर में आकर पत्नी से बुरा व्यवहार करे, फिर भी औरत चुप रहे; और दूसरी ओर औरत

कभी-कभार साल में एक-आध बार बड़ी-बूढ़ियों के साथ घूम-फिर आए तो क्या उस पर ऐसा अत्याचार करना न्यायोचित है ? औरत तो मेरे भाई घर की लक्ष्मी होती है, सारे घर को चलाती है, बच्चों को पालती, बड़ा करती है। अगर उसको देवी मानकर सम्मान नहीं करना चाहते तो उसे पशु समझ कर उस पर जुल्म भी नहीं करना चाहिए। भाभी अगर अपने विश्वास या अन्धविश्वास से मारकण्ड में स्नान करने चली गई, तो अपने स्वार्थ के लिए नहीं तुम्हारी, सारे परिवार की खुशी के लिए। फिर इसमें इतना बुरा मनाने की बात ही क्या थी ?

(उठते हुए परमानन्द के कन्धे पर हाथ रख कर) उठो, देखो कितनी प्यारी बच्चियाँ हैं तुम्हारी, मगर कितनी सहमी हुई हैं तुम्हारे डर से ! इन्हें प्यार करो। ये भी किसी बेटे से कम नहीं अगर तुम इनकी ठीक परवरिश करो।

परमानन्द : (शर्मिन्दा-सा बात को समझ कर महसूस करते हुए और बच्चों को प्यार करते हुए) शायद ठीक कहते हो तुम शान्तिस्वरूप। (प्यार करते हुए) बड़ी प्यारी बेटियाँ हैं ये मेरी।

बेटियाँ : बापू !

परमानन्द : मैं पागल हो गया था क्रोध में।

शान्तिस्वरूप : चलो अगर तुम्हें गलती का अहसास हो गया है तो आगे से ऐसी गलती न करना।

परमानन्द : नहीं भाई, अब कभी ऐसा न होगा।

[शान्तिस्वरूप मुस्कराते हुए उसका कन्धा थपथपाता है और फिर घर की राह पकड़ता है। सभी एकत्रित लोग भी शान्ति-

स्वरूप की सराहना करते हुए अपने घरों को लौट जाते हैं।]

दृश्य दो

[शान्तिस्वरूप का घर है एक बड़ी-सी हवेली की तरह की पुरानी इमारत जो टूटी-फूटी हालत में है। शान्तिस्वरूप के पिता मुंशी ठाकुरदास जी एक साधारण वेशभूषा वाले रिटायर्ड मुंशी है। आयु 60 वर्ष से ऊपर है। घर में पत्नी शकुंतला देवी के साथ रहते हैं तथा थोड़ा-बहुत खेती में जमींदारी का काम करते है। शकुंतला देवी बहुत सरल स्वभाव वाली पतिव्रता धर्मपरायण स्त्री है। इनके दो बेटे हैं—शान्तिस्वरूप व श्यामसुन्दर। जैसे ही शान्तिस्वरूप घर की ड्योढी में प्रवेश करता है सबसे पहले श्यामसुन्दर कोने में बैठा बीड़ी पीता नजर आता है। बड़े भाई पर नजर पड़ते ही श्यामसुन्दर बीड़ी बुझा कर छुपा देता है। शान्तिस्वरूप सब कुछ नहीं देख पाता। श्याम स्वयं ही तब आगे बढ़कर घर जा रहे भाई की तरफ जाता है।]

श्याम : (व्यंग्य से) तो आ गए बड़े भैया श्रीमान् शान्तिस्वरूप जी शान्ति का पाठ पढ़ाकर उनको!

शान्तिस्वरूप : (गुस्से में) तो क्या तेरी तरह उनको उकसाता, झगड़ा और बढाता?

श्यामसुन्दर : तुम्हारा मतलब मैं उनको उकसा रहा था?

शान्तिस्वरूप : उकसा नहीं रहे थे तो क्या समझा-बुझाकर चुप करा रहे थे?

श्याम : समझाने की उसमें बात ही क्या थी? कोई गलत काम करे तो अंजाम तो भुगतना ही पड़ता है।

शान्तिस्वरूप : क्या गलत काम किया था परमानन्द की पत्नी ने? यही कि घर से बाहर कदम क्यों रखे? यही कहना

चाहते हो तुम ?

[इतने में अन्दर से शकुन्तला देवी का प्रवेश]

शकुन्तला : यह क्या बहस हो रही है दोनों भाइयों में घर पहुँचते ही ? चलो, पहले अन्दर चलो। मुँह-हाथ धोकर कुछ खा-पी लो। सारा दिन बाहर रहकर शाम को थके हुए भूखे-प्यासे घर पहुँचते हो तुम लोग। और पहुँचते ही एक-दूसरे से उलझ पड़ते हो किसी बहस में। आज क्या हो गया ऐसा ?

श्याम : माँ ! भैया कहते हैं कि घर की बहू-बेटियों को खूब आजादी दो, उन्हें सैर-सपाटे के लिए घर से बाहर भेजा करो। कोई रोक-टोक न लगाओ उन पर।

शान्तिस्वरूप : (बीच में टोकते हुए) नहीं माँ, मैंने ऐसा कुछ नहीं कहा, मेरा मतलब यह नहीं था। मैं तो केवल यह समझाने की कोशिश कर रहा था कि आदमी की तरह औरत भी एक इन्सान है, पिंजरे में बन्द कोई पंछी नहीं।

अम्मा : पर हुआ क्या ?

शान्तिस्वरूप : वह परमानन्द है न खूह वाले कुम्हार का बड़ा लड़का !

अम्मा : जिसकी औरत के पिछले महीने सातवीं लड़की हुई थी ?

शान्तिस्वरूप : हाँ वही। बेचारी बेटा होने की इच्छा से मारकण्ड नहाने चली गई दूसरी औरतों के साथ। यह दारू-खाने से तीन-चार दिन बाद लौटा तो बिना कारण लगा उसको गाली-गलौच करने और मारने-पीटने।

अम्मा : बड़ा गँवार, जाहिल किस्म का निकम्मा आदमी है वह। दिन-भर घर में फटकता नहीं। काम जो करना पड़ जाएगा खेत में। औरत बेचारी बच्चे भी जने उसके, घर का सारा काम भी करे और उसको मार भी सहे। न जाने कब सुधरेंगे ये लोग।

शान्तिस्वरूप : लोग खड़े तमाशा देखते रहे। किसी ने आगे बढ़कर छुड़ाने की नहीं सोची।

श्याम : वह काम तो हमारे सुधारवादी भैया श्री शान्तिस्वरूप जी का जो है। हर तीसरे दिन कोई-न-कोई झगड़ा, उलझन सुलझा कर ही आते हैं आप। (एक मिनट सोचते हुए) एक बात कहूँ भैया, तुम भाषण अच्छा दे लेते हो, कहीं मास्टरी क्यों नहीं कर लेते! मुफ्त में लोगों को शिक्षा देने से क्या फायदा। मास्टर बन जाओगे तो पैसा भी मिलेगा और बड़ा नाम भी कमाओगे। वैसे भी···

शान्तिस्वरूप : (बीच में ही टोकते हुए) हाँ माँ, मैं तो भूल ही गया इस वहम में। मैं सचमुच मास्टर बन गया हूँ। आज जब घर लौट रहा था तो डाकिए ने यह नियुक्ति-पत्र दिया। (निकाल कर माँ को देता है और पाँव छूता है।)

माँ : (खुश होकर) जुग-जुग जियो मेरे लाल! तुम्हारी मेहनत रंग लायी। भगवान ने तुम्हारी इच्छा पूरी कर दी। और तुम्हारे इस झगड़ालू छोटे भाई की जुबान भी सच हो गई।

श्याम : (खुश होकर) सच भैया? तुम सचमुच मास्टर बन गए?

शान्तिस्वरूप : तो क्या शक है तुमको? क्या मैं मास्टर बनने योग्य नहीं हूँ?

श्याम : नहीं-नहीं, ऐसी क्या बात है, आखिर भाई किसके

हो तुम !

[सभी मुस्कराते हैं]

मां : चल हट नालायक । शर्म भी आती है तुझे ! कुछ तो सीखता बड़े भाई से । दसवीं तक तो पास करने की परवाह नहीं की तूने । और एक तेरा यह भाई है जो अपनी मेहनत के सहारे बी० ए० तक पढ़ गया और आज मास्टर भी बन गया ।

शान्तिस्वरूप : (अन्दर से बाहर आते हुए) मां, यह सब आपका और बाबूजी के आशीर्वाद का ही फल है ।

बाबूजी : अरे भाई क्या बात है ! द्वार पर खड़े होकर ही बातें की जा रही हैं, क्या कोई विशेष बात है ?

अम्मा : (उत्सुकता और खुशी से नियुक्ति-पत्र पति को थमाते हुए) हां-हां क्यों नहीं, विशेष बात ही तो है । देखो पढ़ो तो जरा !

शान्तिस्वरूप : (आगे बढ़कर बाबूजी के पांव छूता है) पिता जी, आपके और मां के आशीर्वाद से मुझे आज सरकारी नौकरी मिल गई । मैं मास्टर नियुक्त हुआ बाबूजी !

मां : (खुशी से) यह आपके हाथ में नियुक्ति-पत्र ही तो है ।

बाबूजी : (कुर्ते की जेब से ऐनक निकालकर पढ़ते हैं और पढ़ते-पढ़ते मुस्कराहट चेहरे पर फैल जाती है । पीठ थपथपाते हुए) शाबास बेटा ! हमें तुम पर गर्व है ।

[श्यामसुन्दर खुशी के मारे भाग कर गांव में अपने दोस्तों को इकट्ठा करके यह सारी बात बड़े जोश के साथ सुनाता है ।]

[रात को भोजन के समय जब सभी साथ

बैठे हैं … वार्ता का सिलसिला फिर शुरू होता है।]

बाबूजी : तो यह नियुक्ति तुम्हारी होई स्कूल औहर में हुई है ?

शान्तिस्वरूप : हाँ बाबूजी ! मुझे अगले महीने की पहली तारीख को स्कूल में हाजिर होना पड़ेगा।

श्यामसुन्दर : (बीच में ही) क्या कहा ? औहर में हुई है ? नदिया के उस पार वाले गाँव में ? नहीं-नहीं, तुम वहाँ नहीं जाओगे भैया ! मैं तुम्हें वहाँ नहीं जाने दूँगा।

शान्तिस्वरूप : (हैरान होते हुए) मगर क्यों ?

श्याम : वह तो बहुत दूर है। नदिया के उस पार। वहाँ से तुम रोज कैसे आओगे ?

शान्तिस्वरूप : तो मैं रोज थोड़े ही आया करूँगा।

श्याम : क्या कहा, रोज नहीं आया करोगे ? ठीक है, तो मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा। तुम्हारे बगैर मैं तो नहीं रहूँगा यहाँ।

[तीनों उसके भोलेपन पर हँसते हैं।]

शान्तिस्वरूप : पगला है तू ! इतना बड़ा हो गया पर है अभी बच्चे का बच्चा। क्या झगड़ने के लिए कोई नहीं मिलेगा इसीलिए मेरे साथ जाना चाहता है ?

श्याम : नहीं भैया, यह बात थोड़े ही है। मैं तुम्हारे बिना रहने की बात सोच ही नहीं सकता। कभी रहा हूँ तुम्हारे बगैर मैं आज तक ? तुम्हारे बिना मेरा दिल कैसे लगेगा यहाँ ?

शान्ति : क्यों, थोड़े दोस्त है तुम्हारे यहाँ दिल लगाने के लिए ?

श्याम : हूँ ! दोस्त और भाई एक समान होते हैं क्या ? वो मेरे साथ यहाँ घर में रहेंगे ?

शान्ति : अच्छा ! तो घर मे दिल लगाने के लिए तुम्हे कोई चाहिए ! यह बात है ! ठीक है तो शादी कर देते है तुम्हारी ।

श्याम : (झल्लाते हुए, नकल उतारते हुए) शादी कर देते हैं तुम्हारी ! अपनी तो कर लो पहले ।

शान्ति : मुझे तो शादी मे कोई रुचि नही । न ही मुझे कोई दिल लगाने के लिए चाहिए । (मुस्कराता है)

श्याम : ठीक है, तुम्हें कोई नहीं चाहिए तो मैं भी तुम्हारे बगैर रह लूंगा । (रुंधे स्वर में) तुम्हें मेरी कोई जरूरत नही तो न सही ।

[रो पड़ता है और उठकर अपने कमरे की ओर चल पड़ता है ।]

शान्ति : (प्यार से उसको समझाते हुए) अच्छा-अच्छा रो मत मेरे लाड़ले भाई, मैं वादा करता हूँ कि हर शनिवार को घर आया करूँगा । ठीक है न ! अब तो खुश है ?

[श्याम रोते हुए मुस्करा देता है और अपने कमरे की ओर चला जाता है । शान्ति फिर माता-पिता के पास बैठ जाता है ।]

माँ : सचमुच बहुत लाड़ला है तुम्हारा यह भाई । झगड़ा भी तुम्ही से करेगा और तुम्हारे बगैर रह भी नही सकता ।

शान्ति : मैं इसको अपने साथ ही ले जाता, पर यहाँ पीछे घर में आप दोनों अकेले रह जाएँगे । (बाबूजी की ओर देखकर) आप किस सोच में पड़े हैं बाबूजी ?

बाबूजी : अभी-अभी जो तुमने कहा मैं उसी बात पर गौर कर रहा हूँ । अगर श्याम की शादी कर दी जाए तो शायद यह अपना बचपना छोड़ कर कुछ जिम्मेदारी को समझने लगे, समझ-

दार बन जाए।

शान्ति : आप ठीक सोच रहे हैं। बाबूजी, मैं आपसे सहमत हूँ।

माँ : मगर शान्ति बेटा, बड़ा तो तू है। पहले तेरी शादी होनी चाहिए।

शान्ति : नहीं माँ ! ऐसा कोई जरूरी तो नहीं है। और तू तो जानती है, मेरी शादी में कोई विशेष रुचि नहीं है। वैसे भी अभी जो यह सरकारी नौकरी मिली है कुछ समय वहाँ मन लगाकर काम करूँ, मेहनत करूँ, कुछ पैसा जमा हो जाए, तभी नई जिम्मेदारियों का बोझ उठा पाऊँगा। घर की हालत तो हम सबको पता ही है।

माँ : *ठीक है बेटा, जैसा तू ठीक समझे।*

[माँ बर्तन वगैरा उठाकर अन्दर रसोई में चली जाती है।]

शान्ति : कोई रिश्ता है नजर में बाबूजी अपने श्याम के लिए ?

ठाकुरदास : लड़के वालों को रिश्तों की क्या कमी होती है बेटा। अभी परसों ही शास्त्री विष्णुदत्त जी अपनी दोनों बेटियों का रिश्ता तुम दोनों भाइयों के लिए लेकर आए थे। मैंने ही लापरवाही से बात टाल दी।

शान्तिस्वरूप : क्यों, लड़कियों में कोई दोष है बाबूजी ?

ठाकुरदास : नहीं बेटा, ऐसी कोई बात नहीं।

शान्ति : तो फिर लापरवाही क्यों ? अगर खानदान अच्छा है, शरीफ लोग हैं, लड़कियाँ अच्छी हैं, तो छोटी लड़की का रिश्ता श्याम से मंजूर कर लीजिए। बात तय हो जाए तो मैं तो चाहूँगा कि जल्दी-से-जल्दी शादी भी सम्पन्न कर दी जाए, मेरे जाने से

पहले। तब तो मैं आप सबकी ओर से पूरी तरह निश्चिन्त हो जाऊँगा।

ठाकुरदास : ठीक है बेटा, अगर तेरी यह इच्छा है तो मैं कल ही उनसे बात करता हूँ।

[इतने में माँ कमरे में दाखिल होती है।]

तुम्हारी क्या राय है श्याम की माँ इस बारे में? सुन रही थी न तुम शान्ति क्या कह रहा था अभी?

माँ : मेरी क्या राय होगी! जो तुम दोनों ठीक समझते हो वह ठीक है।

[श्याम की शादी विष्णुदत्त की छोटी बेटी मणि के साथ हो जाती है।]

[शान्तिस्वरूप घर छोड़कर अपनी नौकरी पर हाजिर होने जा रहा है। उसके माता-पिता, श्याम व उसकी पत्नी नई दुल्हन मणि सब उसको छोड़ने गाँव के कुएँ तक आते हैं। गाँव के कुछ अन्य लोग भी हैं पास-पड़ोस वाले तथा श्याम के दोस्त। शान्ति सब बड़ों के पाँव छूता है। सबकी आँखों में आँसू हैं। श्याम भाई के पाँव छूता है तथा गले मिलकर बहुत जोर से रोता है। शान्ति की भी आँखों में आँसू आ जाते हैं। शान्ति श्याम को चुप कराता है तथा समझाता है कि अब वह छोटा नहीं रहा, उस पर अब घर की, माता-पिता व पत्नी की जिम्मेदारी का बोझ है। अपनी पत्नी के प्रति विशेष उत्तरदायित्व की याद दिलाकर उसे कहता है कि वह उसका सदा आदर

करे तथा कभी कोई लापरवाही वाली बात न करे। मणि भी शान्ति के पाँव छूती है। शान्ति उसे आशीर्वाद देता है तथा भरे हुए गले से उससे आग्रह करता है कि वह उसके भोले अनजान छोटे भाई का तथा माता-पिता का ख्याल रखे।]

[विदाई का दृश्य समाप्त होता है। शान्ति-स्वरूप किश्ती में बैठकर नदिया के दूसरी ओर जा रहा है तथा इधर उसके माता-पिता, श्याम, मणि आदि सब वापिस घर लौट आते

दृश्य तीन

[औहर का हाई स्कूल। स्कूल में चहल-पहल। स्कूल के बाहर ग्राउण्ड में सजावट, रंगीन कागजों की झंडियाँ, सफाई, चूना आदि लगाकर पत्थरों से सजी फूलों की क्यारियाँ आदि। स्कूल मे कुछ अध्यापक-बच्चों के अतिरिक्त आसपास के गाँवों के मुख्य लोग, सभी स्कूल के इंस्पेक्टर साहिब के आने के इन्तजार में। गेट के पास कुछ अध्यापक, विशिष्ट व्यक्ति हाथों में फूलों के हार लिए स्वागत की तैयारी में। शान्तिस्वरूप भी उन्हीं के बीच में खड़ा हुआ है। साथ में बड़ौआ गाँव का नम्बरदार कृष्णदेव खड़ा है तथा दूसरी ओर स्कूल का अध्यापक शालिग्राम शास्त्री खड़ा है। इन्तजार मे खड़े लोग समय बिताने के लिए एक-दूसरे से बात-चीत कर रहे हैं। शान्तिस्वरूप को पहली बार स्कूल के स्टाफ में देखकर कृष्णदेव उससे पूछते हैं।]

कृष्णदेव : आप इस स्कूल मे अध्यापक है क्या?

शान्ति : जी हाँ। मैं अभी नया ही आया हूँ। कल ही हाजिर हुआ हूँ ड्यूटी पर।

कृष्णदेव : बड़ी खुशी की बात है। (हाथ मिलाने के लिए आगे बढ़ता है) मैं यहाँ पास ही के गाँव बड़ोआ का नम्बरदार हूँ।

शान्ति : (हाथ जोड़कर नमस्कार करता है) बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर।

कृष्णदेव : क्या नाम है आपका मास्टर जी ?

शान्ति : जी, शान्तिस्वरूप नाम है मेरा। मैं चांदपुर के मुंशी ठाकुरदास जी का बड़ा बेटा हूँ। यहाँ अंग्रेजी विषय में अध्यापक के रूप में मेरी नियुक्ति हुई है।

कृष्णदेव : बी० ए० तक पढ़े हुए मालूम होते हो! पढ़ने में काफी रुचि है क्या ?

शान्ति : जी हाँ (शरमाते हुए) अच्छा लगता है पढ़कर नई बातें सीखना, ज्ञान बढ़ाना।

कृष्णदेव : शाबास ! होनहार लगते हो। बच्चों को भी इसी शौक से पढ़ाना। हमारे गाँव में तुम्हारे जैसे होनहार, मेहनती मार्गदर्शकों की जरूरत है।

[इतने में जीप के आने की आवाज। खड़े हुए लोग सतर्क हो जाते हैं। जैसे ही शिक्षा अधिकारी जीप से उतरते हैं, मुख्य अध्यापक तथा दूसरे सब स्वागत के लिए खड़े लोग उनका अभिवादन करते हैं तथा हार पहनाते हैं। मुख्य अध्यापक चलते-चलते सबका परिचय देते है तथा इस तरह वे सब स्टेज पर, जहाँ पुरस्कार-वितरण का मुख्य समारोह होना है, वहाँ पहुँच कर अपना-अपना स्थान ग्रहण करते हैं। शांतिस्वरूप व बाकी कई लोग स्टेज के सामने लगी कुर्सियों पर बैठते हैं। समारोह आरम्भ होता है।

मुख्य अध्यापक : बहुत सौभाग्यपूर्ण दिन है आज कि हमारे माननीय शिक्षा अधिकारी महोदय इस स्कूल के वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह की अध्यक्षता करने यहां पधारे हैं। मैं उनका अपनी ओर और अपने स्कूल की ओर से हार्दिक स्वागत करता हूं। (तालियां) मुझे बहुत खुशी हो रही है यह बताते हुए कि हमारा स्कूल न केवल शिक्षा के स्तर में ही निरन्तर उन्नति करता जा रहा है, बल्कि खेल-कूद, सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रतियोगिताओं में भी किसी दूसरे स्कूल से पीछे नहीं है। हमारे होनहार और मेहनती विद्यार्थियों और अध्यापकों के निरन्तर प्रयास से हमारा स्कूल जिले-भर में वार्षिक परीक्षाओं और दूसरी प्रतियोगिताओं में कई प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त कर चुका है। अत्यन्त हर्ष और गर्व का विषय यह है कि इस विद्यालय की होनहार छात्रा कुमारी सुशीला इस वर्ष की मैट्रिक परीक्षा में जिले-भर में प्रथम रही है। (तालियां)

इन सारी सफलताओं और उपलब्धियों का श्रेय जहां एक ओर हमारे विद्यार्थियों और अनुभवी मेहनती अध्यापकों को जाता है, वहीं मैं आभार प्रकट करना चाहता हूं अपने माननीय शिक्षाधिकारी महोदय का जिनकी प्रेरणा, मार्गदर्शन और निरन्तर सहयोग से हमारा यह स्कूल पूरे जिले के श्रेष्ठ स्कूलों में गिना जा रहा है। मुझे आप सबको यह बताते हुए भी खुशी हो रही है कि हमारे स्कूल में जो एक अंग्रेजी के योग्य अध्यापक की कमी थी वह भी शिक्षाधिकारी जी की कृपा से पूरी हो गई। कल ही हमारे स्कूल में श्री शांतिस्वरूप जी ने अंग्रेजी के अध्यापक के रूप में ज्वायन किया है। (शांतिस्वरूप

खड़े होकर सबको हाथ जोड़ता है। सबकी नजरें उसकी तरफ उठती हैं और सभी तालियाँ बजाते हैं।) अब मैं श्रीमान से निवेदन करता हूँ कि वह बच्चों को इनाम दें !

[स्टेज पर सजे हुए इनामों के पास एक अध्यापक आता है, नाम पढ़-पढ़ कर पकड़ाता जाता है।]

हैडमास्टर : (माइक पर बोलते हुए) सबसे पहले मैं अपनी होनहार छात्रा कुमारी सुशीला को स्टेज पर बुलाता हूँ, जिसने जिले-भर मे प्रथम आकर न केवल हमारे स्कूल की शान मे चार चाँद लगाए है, बल्कि नारी-शिक्षा की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया है तथा प्रोत्साहन दिया है।···कुमारी सुशीला।

[सुशीला जो छात्रों के बीच बैठी हुई है, शरमाती-सी स्टेज पर जाती है। सभी जोर-जोर से तालियाँ बजाते हैं। शिक्षाधिकारी इनाम देते है (पुस्तक) तथा कुछ बातचीत करते हैं जो श्रोता नही सुन सकते। उधर शातिस्वरूप के साथ बैठे हुए कृष्णदेव भी बड़े गर्व से शांतिस्वरूप को बताते हैं कि सुशीला उनकी बेटी है। शान्ति बड़ी गौर से सुशीला को देखता है। सुशीला इनाम लेकर वापिस अपनी जगह आकर बैठ जाती है। फिर बाकी कुछ लड़के-लड़कियाँ इनाम लेते हैं। अन्त मे धन्यवाद के साथ समारोह समाप्त हो जाता है।]

[जैसे ही सब जाने के लिए उठते है, सुशीला दौड़ी-दौड़ी आकर खुशी से अपने पिताजी के हाथ मे अपना इनाम थमा देती है।

पिताजी उसे प्यार करते हैं और आशीर्वाद देते हैं। वह वापिस अपनी सहेलियों के पास जाने के लिए मुड़ती है तो पिताजी उसे रोक कर उसका परिचय शान्ति से कराते हैं। वह नमस्ते करती है। शान्ति भी उत्तर में हाथ जोड़ता है तथा उसे उसकी सफलता पर बधाई देता है। फिर वह चली जाती है और दृश्य बदल जाता है।]

[सात-आठ दिनों के बाद अचानक कृष्णदेव और शान्ति की मुलाकात होती है। शान्ति कन्धे से थैला लटकाए हुए चला आ रहा है, दूसरी तरफ से कृष्णदेव आते हैं। जहाँ वे मिलते हैं, छोटा-सा बाजार है, तीन-चार चाय की दुकानें हैं, एक नाई की दुकान है तथा एक छोटी-सी दर्जी की दुकान है।]

शान्ति : (अचानक सामने कृष्णदेव को देखकर) नमस्कार नम्बरदार जी !

कृष्णदेव : नमस्ते मास्टर जी। कहिए कहाँ से आ रहे हो ?

शान्ति : जी, घर गया था वहीं से लौट रहा हूँ।

कृष्णदेव : हूँ ! घर वालों के लाड़ले लगते हो। क्या रोज चाँदपुर से आते हो ?

शान्ति : जी नहीं ! दूर पड़ता है इसलिए रविवार को छुट्टी में ही जा पाता हूँ।

कृष्णदेव : तो अब स्कूल जा रहे हो ?

शान्ति : जी हाँ।

कृष्णदेव : चलो, मैं भी उधर ही दुकान की तरफ जा रहा हूँ। (कुछ कदम चलने के बाद) तो यहाँ कहाँ रह रहे हो ?

शान्ति : जी, यहाँ मन्दिर है न, उसके पुजारी के पास

एक छोटा-सा कमरा खाली पड़ा था। आजकल उसी में रह रहा हूँ। स्कूल भी पास ही पड़ता है।

कृष्णदेव : और खाना ? आप बनाते हो क्या ?

शान्ति : (मुस्कराते हुए) जी नहीं ! मुझे खाना बनाना नहीं आता।

कृष्णदेव : तो क्या मन्दिर के भोग से ही सन्तुष्ट हो जाते हो ? (दोनों हँसते हैं)

शान्ति : वह रामजी हलवाई है न बस उसी को प्रार्थना की थी खाना पकाने के लिए। बेचारा मान गया। उसी के यहाँ खा लेता हूँ।

कृष्णदेव : अरे भई ! हमारे यहाँ आ जाया करो। ज्यादा दूर नहीं है। बस, यही कोई 20 मिनट का रास्ता है। कभी वैसे ही टहलते-टहलते आ गए। क्यों ? ठीक है न ?

शान्ति : (शरमाते हुए) जी शुक्रिया !

कृष्णदेव : लो, तुम्हारा स्कूल आ गया। अच्छा सुनो, ऐसा करते हैं, मुझे आज शाम को पटवारी के यहाँ जाना है। आते-आते मैं तुम्हे साथ लेता आऊँगा। कोई काम वगैरा तो नहीं है तुम्हे ?

शान्ति : जी नहीं ! ऐसा तो कोई आवश्यक काम नहीं। (कुछ सोचते और शरमाते हुए) लेकिन···फिर कभी आ जाऊँगा।

कृष्णदेव : फिर···फिर सही। आज मैं तुम्हे घर का रास्ता तो बता दूँ साथ लाकर।

शान्ति : जी जैसी आपकी आज्ञा। अच्छा नमस्कार।

कृष्णदेव : नमस्कार।

[दोनो चले जाते हैं।]

[शाम का समय। कृष्णदेव और शान्ति दोनों

खेतो के रास्ते वड़ोआ गाँव की तरफ जा रहे हैं। आपस में हल्की-फुल्की वातचीत चल रही है। यह 15-20 घरों का गाँव है। गाँव का पहला घर ही कृष्णदेव का घर है। दूसरे घरो की अपेक्षा बड़ा। चारो तरफ से पर्दे के उद्देश्य के वन्द-सा। ड्योढ़ी के एक ओर कुछ पशु बँधे हुए। मकान के आगे खुला फैला हुआ पत्थर का आँगन। लकड़ी पर नक्काशी का काम किए हुए दरवाजे और खिड़कियों वाला पक्के फर्श का मेहमानों का कमरा। इसी कमरे में दोनों प्रवेश करते हैं। कृष्णदेव शान्ति को कुर्सी पर विठाते है। बाहर बछिया के रँभाने की आवाज आती है। सुशीला अन्दर दूसरे कमरे से निकल कर उसकी तरफ जाती है। आंगन में सुशीला को जाता देखकर उसके पिताजी उसे आवाज देते हैं।]

कृष्णदेव : सुशीला बेटी !

सुशीला : (गाय के पास से आकर) आप आ गये पिताजी ! (उनकी तरफ आती है।)

कृष्णदेव : हाँ बेटी ! देखो तो वो अपने नये मास्टर जी आये हैं।

सुशीला : नमस्ते जी !

शान्ति : (उठते हुए) नमस्ते !

[एक क्षण के लिए दोनों की नजरें मिलती हैं, पर अगले ही क्षण सुशीला शरमा कर नजरें झुका लेती है। वह अपने पिताजी के साथ वाली कुर्सी उनके समीप खीच कर बैठ जाती है।]

कृष्णदेव : वह रामदेई नही आई अभी तक बेटी ? सांझ

कृष्णदेव : वह रामदेई नहीं आई अभी तक बेटी ? सांझ हो चली है, गाय दोहने का वक्त हो गया है। बछिया भी रँभा रही थी।

सुशीला : उसको मैंने मना कर दिया था पिताजी। सुबह जब वह बर्तन, सफाई वगैरा करने के लिए आई थी तो कह रही थी कि उसकी तबियत ठीक नहीं है। कई दिनों से पीठ में दर्द है, आज तो बुखार भी था उसे। इसीलिए मैंने मना कर दिया।

कृष्णदेव : मगर गाय दोहने के लिए फिर कौन आयेगा ?

सुशीला : मैं खुद कोशिश करूँगी पिताजी। थोड़ा-थोड़ा तो कई दिनों से उसके साथ सीख ही रही हूँ। वह तो कह रही थी कि अपनी बहू को भेज देगी, पर मैंने ही मना कर दिया। आज कोशिश करके देख लेती हूँ। नहीं तो बछिया को पिला देंगे सारा।

[कृष्णदेव और शान्ति दोनों उसकी चतुराई पर खुश होते हैं।]

कृष्णदेव : (प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरते हुए) बड़ी सयानी हो गई है मेरी बेटी। अच्छा जा मास्टर जी के लिए चाय-दूध का इन्तजाम तो कर कुछ।

सुशीला : ओह ! मुझे तो ध्यान ही नहीं रहा। लो अभी बना कर लाती हूँ।

शान्ति : नहीं-नहीं, रहने दीजिए। तकल्लुफ करने की क्या जरूरत है !

कृष्णदेव : नहीं बेटा ! तकल्लुफ कैसा ! तुम तो हमारे बेटे के समान हो। इसे अपना ही घर समझो।

शान्ति : (एक-दो क्षण सोचकर) आपके बेटे क्या शहर में रहते हैं ?

कृष्णदेव : (ठण्डी साँस भरकर) मेरे बेटे तो बस ये बेटियाँ ही हैं अब ! सुशीला की माँ की बहुत इच्छा थी कि कम-से-कम एक बेटा तो होना चाहिए जो वंश

के नाम को जिन्दा रखे। मेरा अपना तो कोई ऐसा पक्का विश्वास नही। बेटा हो भी और कपूत निकले तो वंश का नाम मिट्टी में ही मिलेगा। और बेटी सुलक्षणा समझदार हो तो पराए घर, समाज मे जाकर भी दोनों कुलों-खानदानों का नाम रोशन कर देती है। सो इसमें हर्ज ही क्या है, अगर बेटा न भी हो तो। खैर, अपने-अपने सोचने का तरीका है। शायद कुछ पढ़-लिख लेने, ज्ञान प्राप्त कर लेने से मेरी यह विचारधारा अपनी पत्नी की विचारधारा से अलग हो।

शान्ति : शायद आपका यह तर्क सही है। शिक्षा से हमारी विचारधारा जरूर बदलती है और हम सही दिशा में सोचते हैं।

कृष्णदेव : कभी-कभी, सच बताऊँ मास्टर जी, मुझे बहुत दु:ख होता है, जब याद करता हूँ कि यह पुत्र की चाह ही मेरी पत्नी की मौत का कारण बन गई। चार बेटियाँ थीं हमारी, मगर सुशीला की माँ को न जाने यह कैसे विश्वास था कि पाँचवी बार अवश्य बेटा ही पैदा होगा। मगर (ठण्डी साँस भरकर) मास्टर जी, मिलता तो वही जो भाग्य में होता है। इस बार हमारी यह बेटी सुशीला पैदा हुई। मुझे अफसोस नहीं हुआ कि लड़की हुई, दु:ख हुआ कि इसकी माँ के विश्वास को ठेस पहुँची और (भर्राए गले से) शायद वह इस ठेस को बर्दाश्त न कर सकी। सुशीला को एक नजर गौर से देख कर बस उसने सदा के लिए अपनी आँखें बन्द कर लीं। तब से मैं ही इसके लिए माँ और बाप दोनों हूँ। और यह भी मेरे लिए बेटी नहीं बेटे के समान है।

(दु:ख और आवेश के स्वर में) बताइए, मास्टर

जी, क्या किसी बेटे से कम है मेरी यह बेटी ? पूरे जिले में प्रथम आई है मैट्रिक की परीक्षा में। सब लड़कों को पीछे नहीं कर दिया इसने अपनी योग्यता से ? गर्व से मेरा सीना फूल रहा था, जब सारे स्कूल, समाज के सामने इसकी बड़े-बड़े अफसरों ने प्रशंसा की, इसे इनाम मिला। क्या मेरा और सारे स्कूल, अपने जिले का नाम रोशन नहीं किया इसने ? देखना मास्टर जी, एक दिन मेरी यह गुणवती होनहार बेटी पराए घर जाकर भी मेरा, अपने कुल, खानदान, घर का नाम बड़ा करेगी।

[इतने में ही सुशीला चाय, दूध वगैरा और कुछ खाने के लिए लेकर आती है। बीच में रखी मेज पर सब रख कर दोनों को पकड़ाती है। शान्ति बड़े गौर से उसे देखता है।]

सुशीला : बड़े खामोश बैठे हैं पिताजी ?

कृष्णदेव : (मुस्कान जबरदस्ती चेहरे पर लाते हुए) नहीं, नहीं बेटी ! बैठो, तुम भी लो।

[सुशीला बैठती है। अपना प्याला उठाकर जैसे ही नजर सामने उठती है, शान्ति से उसकी नजरें चार होती हैं। वह शरमाकर नजरें झुका लेती है। मगर शान्तिस्वरूप की नजरें उसके चेहरे से नहीं हटतीं।]

कृष्णदेव : हाँ, तो मास्टर जी, मैं पूछ रहा था, आपको कैसा लगा यह स्कूल, यहाँ के लोग ?

[कृष्णदेव की नजरें पड़ते ही शान्ति डर के अपनी नजरें सुशीला के चेहरे से हटा कर उनकी तरफ देख कर बात करता है।]

शान्ति : जी बहुत अच्छा है। बहुत मेहनती विद्यार्थी हैं।

पढने की लगन है उनमें। बस सही मार्गदर्शन की जरूरत है। स्टाफ अच्छा है। और लोग तो अच्छे हैं ही, यहाँ आपसे मिलकर भला कोई सन्देह रह गया है इस बात में !

[सुशीला बाप के कान में फुसफुसाती है। इतने में ही बछिया के रँभाने की फिर आवाज आती है।]

कृष्णदेव : अच्छा-अच्छा ठीक है। बात करेंगे। सुन, देख तेरी लाड़ली वह गौरी तुझे बुला रही है।

सुशीला : (प्याला नीचे रखकर उठते हुए) मैं जा रही हूँ उसके पास पिताजी।

[सुशीला उठने लगती है। सामने फिर शान्ति पर नजर पड़ती है और नजरें एक-दूसरे से फिर टकराती हैं।]

शान्ति : गौरी आपकी दूसरी बेटी का नाम है ?

कृष्णदेव : (हँसते हुए) गौरी तो इसकी लाड़ली बछिया का नाम है। जब से वह पैदा हुई है, इसको जैसे कोई प्यारी सहेली या बहन मिल गई है। इसकी अपनी चारों बहनें तो अपने-अपने ससुराल चली गई हैं। कभी त्योहार-पर्व पर ही आना हो पाता है उनका। घर-गृहस्थी के जंजाल में जो फँस गई हैं। यहाँ बस मैं हूँ और यह है। जब तक इसकी परीक्षा नहीं हुई थी, तब तक पढ़ाई में व्यस्त रहती थी, मन लगा रहता था। पर अब पिछले 5-6 महीनों से स्कूल आना-जाना भी खत्म हो गया है। बेकार घर बैठी रहने से ऊब जाती है कभी-कभी। वैसे तो कुछ-न-कुछ करती ही रहती है। सिलाई, बुनाई, कढ़ाई में भी दिलचस्पी है इसको। बाहर आँगन के साथ फूलों की क्यारियाँ भी सजा रखी हैं। घर को

मजाने-सँवारने का काम भी यही करती है अब। जब से परीक्षा खत्म हुई है, खाना भी दोनों वक्त यही बनाती है। रामदेई तो बस बर्तन, कपड़े, झाड़ू-पोंचा और गाय-बछिया का काम करती है। काम सीखने की लगन है इसमें। पर जो इसकी दिली चाहत या शौक है वह है पढ़ना, पढ़ाई बस! जो किताब(Selected Stories of the best Writers) इसको उस दिन इनाम में मिली थी, तीन दिनों में ही वह सारी पढ़ डाली इसने। (गर्व से बताता है।)

शान्ति : तो आप शहर में कहीं उचित जगह पढ़ने भेज दीजिए।

कृष्णदेव : कहाँ भेज दूँ मास्टर जी! (ठण्डी साँस भर कर) यह जब से पैदा हुई है, मुझे छोड़कर कभी कहीं नहीं गई। सौभाग्य से यह औहर का स्कूल मिडल से हाई बन गया तो मैट्रिक कर गई। नहीं तो घर के बाहर कहाँ भेजता इसको! (लहजा बदलते हुए) सच बताऊँ मास्टर जी, मैं स्वयं भी इसके बिना नहीं रह सकता। पर सोचता हूँ, यह स्वार्थ है मेरा। आखिर एक दिन तो इसे भी ससुराल भेजना ही पड़ेगा। तब मन में आता है, अच्छा घर-वर मिल जाए तो अब इसकी शादी ही कर दूँ और अपनी जिम्मेदारी से निश्चित हो जाऊँ।

शान्ति : वह तो बात ठीक है, परन्तु जब तक कोई बात तय नहीं होती, यह घर बैठे भी पढ़ सकती हैं। इनमें योग्यता है, अगली किसी परीक्षा की तैयारी भी कर सकती हैं। इस तरह खाली समय भी कट जाएगा और शौक भी पूरा हो जाएगा।

कृष्णदेव : यह तुमने बड़ी अच्छी बात कही। अपनी लगन और मेहनत से यह सचमुच घर बैठे भी परीक्षा की तैयारी

कर सकती है। परीक्षा भी छोड़ो। क्या करना है इसे आगे ऐसी परीक्षाएँ पास करके ! कोई नौकरी तो करनी नहीं। पर हाँ, नई चीजों, नया ज्ञान हासिल करने में बुराई ही क्या है। अंग्रेजी सीखने का इसे बड़ा शौक है। छोटी-मोटी कविताएँ भी लिखती है कभी-कभी अंग्रेजी में।

शान्ति : (खुश होते हुए) अच्छा ! यह तो बड़ी खुशी की बात है।

कृष्णदेव : मुझसे तब कान में पूछ रही थी, मास्टर जी क्या विषय पढ़ाते हैं। मैंने कहा अंग्रेजी, तो मालूम है क्या कहने लगी ?

शान्ति : क्या ?

कृष्णदेव : *पगली है बस ! कहने लगी, अरे इनसे कहो, मुझे* पढ़ा दिया करें अंग्रेजी। (हँसते हैं)

शान्ति : (कुछ सोचने की सी मुद्रा में) कोई हर्ज की बात नहीं है।

कृष्णदेव : (खुश होते हुए) सच ? मगर बेटा—तुम्हारे पास इतना वक्त कहाँ होगा ? और यहाँ इतनी दूर आना-जाना कैसे होगा ?

शान्ति : अगर कोई काम करना हो तो वक्त तो निकल ही जाता है। स्कूल के बाद शाम को एक घण्टा आकर मैं पढ़ा जाया करूँगा। आने-जाने में भी कोई परेशानी की बात नहीं, बल्कि रोज की सैर हो जाया करेगी। आप जब मुझे बेटे के समान समझते हैं, तो मैं भी आपके किसी काम आ सकूँ तो यह मेरा सौभाग्य ही होगा।

कृष्णदेव : (बहुत खुश होकर) धन्यवाद मास्टर जी, बहुत-बहुत धन्यवाद !

शान्ति : (उठते हुए और मुस्कराते हुए) नहीं, अब मास्टर

जी नहीं, बेटा ही कहिए।

कृष्णदेव : चिरंजीव रहो बेटा ! भगवान तुम्हे सदा सुखी रखे।

शान्ति : अच्छा अब मैं इजाजत चाहूँगा, अँधेरा होने लगा है।

कृष्णदेव : (उठते हुए) ठीक है, मैं साथ आता हूँ।

शान्ति : नही ! नही ! तकल्लुफ न कीजिए ! अब रास्ते की पहचान हो गई है मुझे। मैं स्वयं चला जाऊँगा।

[दोनों जाने लगते हैं, उधर से सुशीला हाथ में दूध का डिब्बा जिसमें गाय को दोहकर लाई है, लिये निकलती है।]

कृष्णदेव : सुशीला बेटी ! मास्टर जी जा रहे हैं, मैं नीचे तक उनको छोड़कर आता हूँ। और सुन ! तुझे पढाने के लिए मान गए हैं। कल से आया करेंगे। अब तो खुश है न !

सुशीला : (बहुत खुश होकर) सच ! मास्टर जी ? बहुत-बहुत धन्यवाद !

[सुशीला शान्ति को खुशी व कृतज्ञतापूर्ण नजरो से देखती है। शान्ति भी मुस्काते हुए अर्थपूर्ण नजरो से उसे देखकर हाथ जोड़ता है और फिर वे दोनो चले जाते हैं। सुशीला खुशी से उछलती हुई अन्दर आती है।]

दृश्य चार

[कृष्णदेव के घर का एक कमरा। कमरे मे साधारण फर्नीचर है। दीवार पर एक तरफ विवेकानन्द की तस्वीर तथा दूसरी दीवार पर टैगोर की र है। कोने की तरफ काँच और सीपियों आदि से बनाई कलात्मक

वॉल हैंगिंग है। फर्श पर कोने में ताजे फूलों का गुलदस्ता है। तीन-चार कुर्सियां है तथा एक छोटी मेज है। फर्श पर नीचे साधारण कालीन है शान्ति घर के आंगन में थैला लिए उसी तरह कन्धे से लटकाए दाखिल होता है। कृष्णदेव उसका स्वागत करते हुए अन्दर इस कमरे में ले जाते हैं दोनों कुर्सियों पर बैठते हैं।]

कृष्णदेव : कोई परेशानी तो नही हुई यहाँ पहुँचने मे ?

शान्ति : (उत्सुकता से) जी नहीं ! मैं तो सीधा चला आया

[दोनों मुस्कराते हैं।]

कृष्णदेव : बहुत अच्छा ! अच्छा बताइए, चाय लेंगे या दूध ?

शान्ति : कुछ नहीं ! मुझे इस सब की आदत नहीं है और न ही अब आप रोज-रोज मुझसे ऐसा आग्रह करेंगे जब भी मुझे आवश्यकता होगी मैं स्वयं ही आपको बता दूंगा।

कृष्णदेव : (हैरान व प्रसन्न होने की मुद्रा में) बड़े सख्त अनुशासन में रखा है, अपने आपको मास्टर जी खैर ! बहुत अच्छी बात है। हमारे नौजवान अगर आपकी तरह अनुशासन को जीवन का एक अंग बना लें तो हमारा समाज और देश बहुत मजबूत हो सकता है। और यह अनुशासन बाहरी दबाव से सिखाए जाने से नहीं, अपितु अपने आप से, स्वयं से अपने घर से ही अपनाया जा सकता है। खैर, छोड़ें आप जैसे समझदार नौजवान के लिए मैं क्या नई बात समझा सकता हूं। जैसी आपकी इच्छा ! हां केवल आज आप मेरे कहने से चाय पी लीजिए क्योंकि मैंने भी नही पी है। मैं आपका इन्तजार कर रहा था। भविष्य में सब आपकी मर्जी के अनुसार मंजूर ?

शान्ति : (मुस्कराते हुए) ठीक है। जैसी आपकी आज्ञा

[सुशीला दोनो के लिए चाय लाती है।]

भी वहीं बैठ कर पीती हैं। बीच में थोड़ी हल्की-फुल्की अस्पष्ट बातचीत। चाय जल्दी से खत्म करके कृष्णदेव खड़े हो जाते हैं।]

कृष्णदेव : अच्छा, आप दोनों अब अपना पढ़ाई का कार्यक्रम शुरू कीजिए। मैं जरा खेतों की ओर जा रहा हूं। यह रामदीन अभी तक बैल लेकर नहीं लौटा। देखता हूँ क्या बात है।

[कृष्णदेव चला जाता है। सुशीला वहां से बर्तन वगैरा हटा देती है। वह साधारण सूती वस्त्रों में बड़ी भोली व आकर्षक लग रही है। अपनी कापी-पेन्सिल लाकर वह शान्ति की कुर्सी के समीप नीचे बिछे कालीन पर बैठने लगती है, मगर शान्ति उसको नीचे बैठने से रोकता है।]

शान्ति : यह कुर्सी पास पड़ी है। यहाँ बैठ जाओ।

सुशीला : नहीं मास्टर जी ! आप मास्टर जी हैं, मैं आपके बराबर कैसे बैठ सकती हूँ ? स्कूल में भी तो हम नीचे चटाइयों पर ही बैठते थे।

शान्ति : (मुस्कराते हुए) पर यह स्कूल तो नहीं है न। स्कूल की बात अलग होती है। और मैं स्वयं ही तो कह रहा हूँ कि कुर्सी पर बैठो। मास्टर का कहना नहीं मानोगी ?

सुशीला : जी, अच्छा !

[शरमाते, हिचकिचाते हुए, शान्तिस्वरूप के आगे रखे मेज के दूसरी ओर पड़ी कुर्सी पर बैठ जाती है।]

शान्ति : (एक क्षण की चुप्पी के बाद) तो, अंग्रेजी सीखना चाहती है आप ?

सुशीला : (नजरें नीचे किए हुए बैठी है। नजरें ऊपर उठाकर शान्ति की ओर हैरानी से देखते हुए) जी, 'आप' !

शान्ति : क्यों ? क्या हुआ ? मेरे आप कहने में आपत्ति है ?

सुशीला : मगर, स्कूल में तो सभी मास्टर हमें तुम ही कहा करते थे।

शान्ति : पर आप भी कह दिया जाए, तो कोई गलत तो नहीं है। ठीक है, जो आपको ठीक लगे वही कहेंगे आगे से। तुम ठीक लगता है या आप ?

सुशीला : (सिर झुकाए हुए ही) जी, मुझे तो तुम ही अच्छा लगता है। (भोलेपन से मुस्कराती है)

शान्ति : बहुत अच्छा। आपको तुम ही कहेंगे।

[दोनो मुस्कराते हैं।]

शान्ति : कितनी आती है तुम्हें अंग्रेजी ?

सुशीला : (नजरें ऊपर उठाकर) जितनी स्कूल में पढ़ी है, बस उतनी ही।

शान्ति : तुम्हारे पिताजी तो कह रहे थे कि तुम अंग्रेजी में कविताएँ भी लिखती हो।

सुशीला : (बहुत शरमाती है, नजरें झुका लेती है) नहीं—नहीं ! वो तो यूँ…ही…बस…।

शान्ति : इसमें छुपाने की क्या बात है। अपनी सरोजनी नायडू का नाम नही सुना। कितना अच्छा लिखती और निधड़क होकर बोलती थीं वो। बस सुनने वाले मुग्ध रह जाते थे उनकी मीठी वाणी सुनकर। जानती ही न उनके बारे मे ?

सुशीला : जी ! पर वह तो बहुत बड़ी नेता थी।

शान्ति : तो क्या हुआ ! तुम समझती हो लिखना, बोलना, भाषण करना, अपने विचार दूसरो को बताना केवल नेताओ का ही विशेष अधिकार है ? नही ! यह तो एक योग्यता है, कला है, विशिष्ट गुण है जो किसी मे भी किसी भी अवस्था मे पाया जा सकता है। और जिसमे भी यह योग्यता, यह कला हो, उसे

बाहर व्यक्त करना चाहिए, प्रदर्शित करना चाहिए। विचारों को अभिव्यक्ति अवश्य मिलनी चाहिए। अभिव्यक्ति से ही यह कला विकसित होती है। शायद तुम नहीं जानतीं कि लेखकों की कलम ने दुनिया में क्रांतियाँ लाई हैं, सिंहासन बदल दिए हैं। इतिहास में कितनी ही बार कलम तलवार से ज्यादा ताकतवर सिद्ध हुई है। और यह चिन्तन, लेखन लेखक की वह दौलत है, जिसको अगर वह अन्दर-ही-अन्दर संचित करके रखे, तो न तो स्वयं को उससे लाभ है न दूसरों का कोई हित। रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविताएँ अगर उनके घर के कोने में अलमारी में बन्द पड़ी रह जातीं तो आज हम कैसे जान पाते कि वह कितने महान कवि थे जिनकी कविताओं ने भारत की महान संस्कृति और सभ्यता का परिचय पूरे विश्व को दिया! आज हम सब भारतीय क्या उनके कृतज्ञ नहीं हैं?

सुशीला : (विस्मित-सी होकर शान्ति का इतना लम्बा व्याख्यान सुन कर बहुत प्रभावित होती है) जी! आप ठीक कहते हैं।

शान्ति : (अचानक महसूस करता है कि वह बहुत अधिक बोल गया है और अपने लहजे को बदलता है तथा मुस्करा कर सुशीला की तरफ देख कर कहता है।) तो फिर ठीक है। आज का सबक यहीं खत्म। बहुत लम्बा भाषण दिया न मैंने? कहीं तुम घबरा तो नहीं गईं?

सुशीला : (खुश होते हुए) जी नहीं! घबराऊँगी क्यों? बल्कि मुझे तो बहुत अच्छा लगा। आपने कितनी सच बातें कही हैं। (शरमाते हुए) मैं कल आपको

अपनी कविताएँ दिखाऊँगी।

शान्ति : (खुश होते हुए) यह हुई न बात। बहुत अच्छा। अब मैं चलता हूँ। अँधेरा होने लगा है।

[शान्ति चला जाता है। सुशीला आँगन तक छोड़ती है, फिर नमस्ते करके लौट आती है। वह बहुत खुश है। मास्टर जी उसे बहुत अच्छे लगे। इतना प्रभावित तो उसे स्कूल में भी किसी मास्टर ने न किया था। वह उनके बारे में बड़ी देर तक सोचती रहती है। फिर अपनी कविताओं वाली कापी निकालती है। अपनी कविताएँ पढ़ते हुए पेज बदलती है। इतने में कृष्णदेव वापिस आ जाते हैं।]

कृष्णदेव : (आँगन से खाली कमरे की ओर देखते हुए) मास्टर जी चले गये, बेटी ?

सुशीला : (उत्सुक-सी फौरन बाहर आती है) हाँ, पिता जी ! अभी थोड़ी देर पहले गये हैं।

कृष्णदेव : अच्छा पढ़ाते हैं ? कैसे हैं तुम्हारे मास्टर जी ?

सुशीला : (खुशी और उत्सुकता से) मास्टर जी ? मास्टर जी तो पूरे ज्ञान का खजाना हैं। एक ही साँस में पूरा इतिहास बता देते हैं।

कृष्णदेव : (हँसते हुए) तुम्हारा मतलब बहुत ज्यादा बोलते हैं ?

सुशीला : नहीं-नहीं ! मेरा यह मतलब नहीं। मेरा मतलब है मास्टर जी तो Best teacher हैं।

कृष्णदेव : (हैरान-सा) अच्छा !

सुशीला : हाँ, पिताजी, हमारे स्कूल में दीवार पर एक motto था—

Good teacher teaches
better teacher guides
best teacher inspires.

मैं तो कहूँगी ये मास्टर जी तो तीसरी श्रेणी मे आते हैं।

कृष्णदेव : तीसरी श्रेणी ? मतलब ?

सुशीला : (*हँसते हुए*) *तीसरी श्रेणी मतलब 'The best'* !

(संक्षेप में सारी बात बताती है।)

कृष्णदेव : तो दिखा देना तू उनको अपनी कविताएँ कल ।

सुशीला : हाँ ! मैं जरूर दिखाऊँगी। (खुशी-खुशी अन्दर जाकर अपनी कापी-पेन्सिल रखती है और रसोई की तरफ जाती है। कृष्णदेव भी अन्दर जाते हैं।)

[अगले दृश्य में वही कमरा। कमरे में शान्ति और सुशीला]

शान्ति : तो आज दिखाओगी न कविताएँ ?

सुशीला : जी ! ये लीजिए ! (कापी आगे बढ़ाती है।)

[शान्ति titles पढ़ता है पेज बदलते हुए। *Mother, My wish, Butterfly. The Shining Moon. I am not lonely, Bapu. Rain. Gauri my friend.*]

सुशीला : बस ! यह आखिरी poem है। जब गौरी पैदा हुई थी, तब मैंने लिखी थी यह।

शान्ति : तुम्हें इन poems में कौन-सी सबसे अधिक पसन्द है ?

सुशीला : मुझे तो सारी अच्छी लगती हैं, पर Butterfly मुझे बहुत अच्छी लगती है।

शान्ति : क्यों, क्या खूबी है Butterfly में जिससे प्रभावित होकर तुमने poem लिख डाली ?

सुशीला : कितनी सुन्दर होती है Butterfly ! सुन्दर-सुन्दर रंग-बिरंगे पंख। कितना सुन्दर आकार। किसी गन्दी चीज को नहीं खाती। फूलों, पौधों का रस चूसती है केवल और वह भी कितनी सावधानी से कि

फूल को जरा भी नुकसान नहीं पहुँचाती, किसी पर झपटती नहीं, जरा भी शोर नहीं करती। भँवरे से कितनी अलग है, यह शान्त स्वभाव वाली प्यारी तितली! मीठा शहद खाकर उसका स्वभाव भी उतना ही मृदु बन जाता है। मधुर स्वभाव वाली यह नन्ही-सी कलाकृति भगवान की, अपनी विनम्रता में कोयल आदि से भी बढ़कर है। कोयल को घमण्ड होता है कि वह बहुत मीठा गाती है, इसीलिए तो वह चिढ़ जाती है, अगर उसकी आवाज की नकल उतारी जाए। मगर तितली तो कितनी शान्त, विनम्र और कृतज्ञ रहती है, अपने इतने गुणों के बावजूद!

शान्ति : वाह! क्या विचार है! अरे, तुम तो जीवन को कला की दृष्टि से कितनी गहराई से देखती हो! तुम्हारे अन्दर तो सचमुच प्रतिभा छिपी हुई है। (बहुत प्रभावित और खुश होते हुए) जरा स्वयं पढ़कर तो सुनाओ इसे। (कापी उसकी ओर बढ़ाता है। सुशीला कविता पढ़ती है

Butterfly, when I behold you
bewilder me, which point is start with
your beauty, tranquillity, tenderness
in separation or as a whope you.

The combination of colours
hesitate painters to boast them,
are reflections of gay mood
the painter who paints you.

Honey, the sweetest food
accord thee tongue and temper

doesn't harm while sneking
Ah ! Could we learn from you !

Cucoo, the sweetest voice
Seldom sings in gratitude
gets irritated if immitated
is never obliged like you.

शान्ति : Very good ! you've put your heart and soul in painting this picture. Appreciation of nature in its true colours is the correct understanding of the meaning of life. Very well.

सुशीला : मास्टर जी, मैं इतना सब कुछ तो नही समझती जितना आप कह रहे है, पर जो कुछ मुझे अच्छा, ठीक लगता है, बस वही लिख देती हूँ।

शान्ति : मैं भी तो वही कह रहा हूँ। सच्चाई और निर्भीकता जीवन मे सफलता के दो मुख्य आधार है। अच्छा लो, मैं तुम्हारे लिए यह Keats की poems की एक छोटी-सी book लाया हूँ। तुम खाली समय मे इनको पढना। Some of them are very interesting and meaningful. You will enjoy them.

सुशीला : Yes, sir ! हमारी दसवी की किताब मे भी Keats की poem थी 'The Gracian Urn.' बहुत सुन्दर कविता थी।

शान्ति : He was a great poet. But died too young. And you know, in such a short span of life he wrote all that ! Great genius.

सुशीला : जी !

शान्ति : अब मैं चलता हूँ। शायद कल दो-तीन दिन तक नहीं आ पाऊँगा।

सुशीला : (चिन्तित-सी) क्यों ? कोई काम आ पड़ा है या तबियत ठीक नहीं आपकी ? या मुझसे कोई भूल हो गई ?

शान्ति : नहीं-नहीं ! ऐसी कोई बात नहीं। मैं दो-चार दिन के लिए घर जाना चाहता हूँ। दीवाली की छुट्टियाँ पड़ रही हैं न !

सुशीला : कहाँ है आपका घर मास्टर जी ?

शान्ति : नदिया के उस पार चाँदपुर नाम का गाँव है न, बस वहीं है मेरा घर।

सुशीला : क्या चाँद जैसा सुन्दर है गाँव आपका ?

शान्ति : (हँसता है) जरूरी तो नहीं कि नाम उनके अर्थ के अनुसार सही होते हों।

सुशीला : पर आपका नाम तो अर्थ के ठीक अनुरूप ही है।

शान्ति : मेरा नाम तो मास्टर जी है। क्यों ? (मुस्कराते हुए उसकी ओर देखता है।)

सुशीला : (शरमाते हुए) मास्टर जी तो आप लगते हैं मेरे। नाम तो आपका और है।

शान्ति : क्या नाम है मेरा ?

सुशीला : (नजरें नीचे करके शरमाते और मुस्कराते हुए) शान्तिस्वरूप।

शान्ति : और तुम्हारा नाम भी तो अर्थ के ठीक अनुरूप है। क्यों ठीक कहा न मैंने ? (अर्थपूर्ण नजरों से उसकी ओर देखता है। उत्तर में सुशीला एक क्षण के लिए नजरें ऊपर उठाकर शान्ति को देखती है। शर्म से उसका चेहरा लाल हो जाता है।)

शान्ति : अच्छा अब मैं चलता हूँ ! (उठता है)

सुशीला : (उठते हुए हाथ जोड़कर) नमस्ते !

[शान्ति चला जाता है। सारे रास्ते सुशीला के बारे में सोचता जाता है। कभी स्वयं ही मुस्कराता है। सुशीला का भी घर में यही हाल है।]

दृश्य पांच

[चाँदपुर में वही पं० ठाकुरदास जी का घर। कमरे के अन्दर का दृश्य। श्याम, उसकी माँ, बहू और बाबूजी बैठे हैं। वातावरण कुछ तनावपूर्ण है।]

माँ : देख बेटा श्याम, जिद नहीं करते। त्योहार का मौका है, तुझे बहू के साथ जाना ही पड़ेगा।

श्याम : (गुस्से में) क्यों जाना पड़ेगा, जब कह दिया मैं नहीं जाऊँगा ? अकेली नहीं जा सकती ये ? छोटी-सी बच्ची है क्या, जो डर लगता है ?

बाबूजी : बच्चा तो तू है जो बच्चों जैसी जिद करता है। समझता ही नहीं बात किसी की भी। क्या कहेंगे वो लोग कि त्योहार के दिन बेटी को अकेले भेज दिया ?

श्याम : देखिए बाबूजी ! मैं कह चुका हूँ कि मैं नहीं जाऊँगा। जिसको जो कहना है कह ले। हाँ ! मैं आज भैया के पास जा रहा हूँ।

माँ : (गुस्से में) वहाँ क्या करेगा जाकर ? वह घर नहीं आएगा क्या ? बहाने बनाता है।

श्याम : उसने आना होता तो हर हफ्ते आता। उस दिन तो बड़ा वादा किया था, मैं हर शनिवार आया करूँगा। अब पूरे दो महीने हो गए हैं। हम तो जैसे उसके कुछ लगते ही नहीं। बच्चो की तरह फुसला कर चला गया। ठीक है। उसको हमारी क्या पड़ी

है ! तो हमें भी कौन-सी परवाह है ! जाओ मैं भी नहीं जाता । (गुस्से में दूसरी ओर मुंह फुलाकर बैठ जाता है। इतने में ही शान्ति घर में प्रवेश करता है और आंगन से ही पुकारता है ।)

शान्ति : श्याम ! माँ !

[श्यामसुन्दर अचानक भाई की आवाज सुनकर आगे उछल पड़ता है, परन्तु दूसरे ही क्षण गम्भीर होकर आवाज को अनसुना करके वैसे ही मुंह फुलाकर बैठा रहता है । माँ और बाबूजी खुश होकर दरवाजे की ओर बढ़ते हैं। शान्ति आकर दोनों के पाँव छूता है। दोनों उसे आशीर्वाद देते हैं। मणि भी शान्ति के पाँव छूती है। मगर श्याम वैसे ही बैठा रहता है। शान्ति हैरान होकर उसकी ओर देखता है ।]

शान्ति : श्याम !

[श्याम चुप रहता है ।]

माँ : यह नाराज है तुमसे। तूने कहा था न कि मैं हर हफ्ते घर आया करूँगा । अब महीने से ऊपर दिन हो गए। अभी-अभी तो कह रहा था कि मैं भैया के पास जाऊँगा, फिर···

श्याम : (गुस्से में) मैंने कब कहा जाऊँगा ? मैं क्यों जाऊँगा ?

शान्ति : (मुस्कराकर प्यार से उसके पास जाकर समझाते हुए) हाँ ठीक है, तू क्यों आएगा मेरे पास। मैं ही आऊँगा ! देख भाई मेरे लाडले, अब मैं सरकारी नौकर हूँ। मर्जी का मामला नहीं है अब। कभी छुट्टी मिल पाती है, कभी कोई विशेष की वजह से रविवार को भी व्यस्त है। वरना कौन है जिसका तेरे जैसे

को दिल न करे।

[सब मुस्कराते हैं, वह भी मुस्कराता है।]

श्याम हाँ-हाँ, बातें तो खूब आती हैं तुमको। मास्टर जो ठहरे।

शान्ति : चल यही सही। पर तू अब गुस्सा थूक दे।

[कुछ क्षणों बाद श्याम का मूड ठीक हो जाता है।]

मणि : (शान्ति के समीप आकर) आपके लिए पानी लाऊँ?

शान्ति : नहीं, अभी नहीं। थोड़ी देर आराम करूँगा। (शान्ति मणि को तैयार हुए देखकर) तैयार होकर बैठी हो भाभी? कहीं जाने की तैयारी है क्या?

माँ : हाँ, बेटा! दो दिन बाद दीवाली है। छः महीने शादी को हो गए। अब यही पहला बड़ा त्योहार आया है। इसके मायके से शास्त्री जी का मझला बेटा, इसका भाई परसों ही बुलाकर गया है।

शान्ति : तो ठीक है, बुलाया है तो जाना चाहिए।

बाबूजी : पर तुम्हारे भाई के दिमाग में यह बात नहीं आती।

श्याम : क्यों, मैंने रोका है क्या?

माँ : हम कब कह रहे हैं रोका है, पर तुझे साथ जाने में आपत्ति क्या है?

श्याम : (झुंझला कर) मुझे ये चोंचले अच्छे नहीं लगते। कह दिया बस, नहीं जाऊँगा!

बाबूजी : अब तू ही समझा बेटा इसको, हमारी बात तो इसकी समझ में आती नहीं।

माँ : शान्ति बेटा! क्या यह अच्छा लगेगा कि बेटे के घर में होते हुए बहू अकेली मायके जाए! नई नवेली दुल्हन! अभी छः महीने ही तो हुए हैं शादी को। क्या कहेंगे इसके मायके वाले!

[वह सिसकती अन्दर चली जाती है ।]

शान्ति : (कुछ देर सोचकर) देख श्याम ! अब तू बच्चा नहीं है। शादीशुदा जिम्मेदार पति है तू अपनी पत्नी के लिए । क्या उसके कोई अरमान नही है ? क्या सोचेगी वह तेरे बारे मे कि तुझे उसकी जरा भी परवाह नहीं है ! जब वह तेरे ही नहीं, माँ और बाबूजी के भी, इस सारे घर के सुख-दुःख का ख्याल रखती है, तो तुम्हारा भी उसके प्रति वैसा ही फर्ज नहीं है ?

श्याम : (झुंझलाकर) मेरा क्या फर्ज है ? उसका पल्लू पकड़ कर पीछे-पीछे चलता रहूँ जहाँ वह जाए ? मैं ऐसा जोरू का गुलाम नहीं बनने वाला ।

शान्ति : मूर्ख है तू ! पत्नी के सुख-दुःख में साथ देने से पति जोरू का गुलाम बन जाता है ? जरूर तुझे तेरी मूर्ख मित्र-मण्डली ने सिखाया होगा यह सब ! खैर छोड़ ! अब की बार चला जा । आगे की आगे देख लेंगे ।

श्याम : ठीक है । इस बार चला जाता हूँ । आगे से मत कहना । (श्याम और मणि दोनों चले जाते हैं ।)

[रात को खाना खाते हुए माँ, बाबूजी और शान्तिस्वरूप बैठे है ।]

शान्ति : माँ, मुझे लग रहा है यह श्याम शादी के बाद भी जरा नहीं सुधरा । वैसा ही लापरवाह, उतना ही जिद्दी है अभी तक ।

बाबूजी : (ठण्डी साँस भरकर) कुछ न पूछ बेटा ! हम तो इसकी शादी करके पछता रहे है। भले घर की शरीफ लड़की को किस मूर्ख के पल्ले बाँध दिया।

माँ : बात-बात पर उससे उलझ पड़ता है ।

लिए, यह मेरी पसंद की सब्जी नही है,

वनाना भी आता है ? कभी कमीज का वटन टाँकना रह गया तो, कभी उसकी कोई चीज एकदम न मिले तो। क्या-क्या बताऊँ ! एक भी बात सही हो उसको तो कोई सहन करे। सोचती हूँ, बड़ा जुल्म है पराए घर की बेटी पर यह !

बाबूजी : अजी, कब तक सहेगी बेचारी यह सब ! और सहे भी क्यों ?

माँ : सचमुच बेटा ! मुझे भी कभी-कभी डर लगता है कि वह इसकी परेशानियों से घबरा कर, तंग आकर कहीं इस घर को छोड़कर हमेशा के लिए मायके न चली जाए !

शान्ति : नहीं, माँ ! ऐसी घबराने की बात नहीं। वह भाई है मेरा। मैं उसको बड़ी अच्छी तरह पहचानता हूँ। दिल का बहुत अच्छा है वह। बिगड़ चुका है मानता हूँ, शायद हम सबके प्यार से या छोटा होने की वजह से। मगर चिन्ता न करो आप ! वक्त के साथ-साथ सब ठीक हो जाएगा। अभी नादान है। मगर ठीक हो जाएगा। आप निश्चिन्त रहें।

दृश्य छः

[बड़ोआ गाँव में वही नम्बरदार का घर। घर में कृष्णदेव और सुशीला दोनों बैठे हैं बाहर आँगन में। कृष्णदेव और एक अधेड़ औरत जिसके साथ एक बच्चा है, बातें कर रहे हैं। सुशीला उस बच्चे से बातें कर रही है, खेल रही है। शान्ति को आँगन में प्रवेश करते देख दोनों खुश होते हैं। शान्ति भी मुस्कराता है।]

कृष्णदेव : (उठते हुए) आइए मास्टर जी ! लौट आए घर से ?

शान्ति : नमस्कार जी !

सुशीला : (उत्सुकता व खुशी से) नमस्ते मास्टर जी !

शान्ति : (उसकी ओर प्यार से देखते हुए) नमस्ते !

कृष्णदेव : (कुर्सी की ओर इशारा करके) आइए, यहाँ बैठिए।

[वह औरत अपने बच्चे को लेकर सुशीला के साथ थोड़ी देर अन्दर जाती है, फिर वापिस अपने घर चली जाती है।]

कृष्णदेव : कब लौटे ? हम आपको याद ही कर रहे थे !

शान्ति : कल शाम को लौट आया था। छुट्टियाँ खत्म हो गई थीं।

कृष्णदेव : घर में तो सब कुशल-मंगल है ?

[इतने में सुशीला हाथ में ट्रे लेकर आती है। ट्रे में कुछ मिठाई रखी है।]

शान्ति : जी ! सब कृपा है ईश्वर की।

कृष्णदेव : देखो सुशीला कितनी खुश हुई कि आप आ गए। कह रही थी, पता नहीं मास्टर जी आएँगे भी या नहीं।

शान्ति : (शरमाता हुआ) नहीं ! मैं तो कहकर गया था कि दो-चार दिन बाद आ जाऊँगा।

कृष्णदेव : चलो सब अच्छा हुआ ! लो यह दीवाली की मिठाई तुम्हारे ही हिस्से की है।

[सुशीला प्लेट आगे बढ़ाती है, और स्वयं भी वहीं बैठ जाती है।]

शान्ति : आप भी लीजिए (कृष्णदेव की तरफ प्लेट आगे करता है। फिर सुशीला को भी देता है।)

कृष्णदेव : (मिठाई खाते-खाते) मास्टर जी !

शान्ति : (बीच में ही टोककर) नहीं ! आपके मुँह से बेटा सुनना ही अच्छा लगता है।

कृष्णदेव : (मुस्कराते हुए) चलो ठीक है। हाँ, तो मैं कह रहा

था बेटा, तुम्हारे घर में कौन-कौन हैं ?

शान्ति : माँ है, बाबूजी है, छोटा भाई श्याममुन्दर है और उसकी पत्नी मणि है।

कृष्णदेव : क्या कहा, छोटे भाई की पत्नी है ? विवाहित है छोटा भाई तुम्हारा ?

शान्ति : जी ! अभी पांच-छः महीने ही हुए। बस इधर मेरी नौकरी लगी और उधर उसकी शादी हुई।

कृष्णदेव : मगर तुम्हारी नौकरी का भाई की शादी से क्या सम्बन्ध हुआ ? बात कुछ समझ में नहीं आई।

शान्ति . (समझाते हुए) जी, बात दरअसल यह है कि मेरा छोटा भाई कुछ ज्यादा लाड़-प्यार में लापरवाह हो गया है। छोटा होने की वजह से घर की जिम्मेदारियों की तरफ कोई ध्यान नहीं देता। तो मैंने सोचा, जब तक मैं घर में था ठीक था, लेकिन मेरी नौकरी लगने पर तो घर, माँ-बाबूजी और उसको भी अकेले छोड़ना था। सो हम सबने यही फैसला किया कि इसको शादी के बन्धन में बांध देते है। शायद नई जिम्मेदारी पड़ने पर अपनी लापरवाही छोड़ दे और घर में भी कोई दूसरा सहारा हो जाए।

कृष्णदेव : हूँ ! (थोड़ा-सा सोचकर) तो तुमने अपने घर और माता-पिता के सहारे के लिए उसकी शादी कर दी ! भई, मैं तो इसे स्वार्थ कहूँगा तुम्हारा।

[सुशीला, जो चुपचाप बड़े ध्यान से सारी बात सुन रही थी, बोली—]

सुशीला : स्वार्थ क्यों पिताजी, ठीक ही तो किया। नहीं तो इनके माता-पिताजी के पास सहारे के लिए कौन होता ?

कृष्णदेव : अपनी शादी करवा लेते। अपनी बहू को वहाँ छोड़

कर माता-पिता की सेवा करवाते।

शान्ति : (विनम्रता से) जी ! आप शायद गलत समझ रहे हैं मुझे। मेरी दरअसल शादी में कोई विशेष रुचि नहीं है और उस समय तो मैं अपने निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के पीछे लगा था। मैंने माँ और बाबूजी को बता दिया था कि मैं सबसे पहले आत्मनिर्भर होना चाहता हूँ। उसके बाद ही शादी करूँगा अगर उनकी यही इच्छा है।

कृष्णदेव : अगर यह बात है, तब तो तुमने ठीक ही फैसला किया। मैं भी सहमत हूँ तुमसे। नई जिम्मेदारी उठाने से पहले आत्मनिर्भर होना आजकल के जमाने में बहुत जरूरी है। मगर, अब तो मंजिल पा ली है तुमने, अब क्या विचार है तुम्हारा शादी के बारे में ? कोई फैसला कर लिया है क्या ?

शान्ति : जी नहीं ! अभी तो कोई ऐसी बात नहीं है। (एक नजर सुशीला पर डालता है।)

कृष्णदेव : ठीक है, तुम्हें लड़कियों की क्या कमी हो सकती है ! पढ़े-लिखे होनहार गुणवान नौजवान हो। तुम्हें तो कोई भी माता-पिता अपनी लड़की देने में गौरव ही समझेंगे अपना !

शान्ति : (शरमाता है) जी ! यह तो आपका मेरे प्रति स्नेह व कृपा है। वरना मैं तो एक बिल्कुल साधारण-सा व्यक्ति हूँ। (उठते हुए) अच्छा ! अब मुझे इजाजत दीजिए, चलता हूँ।

कृष्णदेव : (उठते हुए) ठीक है, कल आओगे न ?

शान्ति : जी ! जरूर आऊँगा।

कृष्णदेव : (साथ-साथ चलते और एकदम कुछ याद करके) अरे हाँ, मैं तो भूल ही गया। कल तो सुशीला की माँ का श्राद्ध है। सुशीला व्यस्त रहेगी उसमें। कुछ ब्राह्मणों

को भोजन कराना है। मँझली और छोटी बेटी भी ससुराल से आएँगी। वे तो आज शाम को ही आ जाएँगी। सो सुशीला तो बनाने-खिलाने के काम में व्यस्त रहेगी। वैसे भी जिस दिन इसकी माँ का श्राद्ध होता है, यह दो-तीन दिन बहुत उदास रहती है। कल तो सारा दिन रोती ही रहेगी। बड़ी बदकिस्मत मानती है अपने आपको। कहती है, मैंने माँ का मुँह भी नहीं देखा। मैं पैदा न होती तो शायद माँ भी न मरती। बहुत समझाना पड़ता है। बच्ची है न! नादान है! (उदास हो जाते हैं)

शान्ति : कोई बात नहीं! मैं दो-तीन दिन बाद आ जाऊँगा। (एक क्षण के बाद) मेरे लायक कोई और सेवा हो तो बताइए।

कृष्णदेव : (आँखें पोंछते हुए) नहीं, कुछ नहीं बेटा! तुम सुखी रहो।

[उसके कन्धे थपथपाता है तथा फिर वापिस घर में मुड़ आता है। शान्ति अपनी राह सोचता हुआ चला जाता है।]

दृश्य सात

[शान्ति और सुशीला उसी कमरे में बैठे हैं। बातचीत का सिलसिला शुरू होता है।]

शान्ति : वह पुस्तक पढ़ी तुमने ?

सुशीला : कहाँ पढ़ पाई मास्टर जी! एक-दो Pomes ही पढ़ी थीं। पहले दो-चार दिन दीवाली में निकल गए। फिर अम्मा का श्राद्ध था। मेरी बहनें और बच्चे आए हुए थे। घर में काम-काज का भी जोर रहा।

शान्ति : तो बहनें चली गईं तुम्हारी अब !

सुशीला : (उदास-सी होकर) चली गईं। कितना रोका मैंने भी, पिताजी ने भी ! बच्चों के साथ कितना दिल लगता है, घर में रौनक हो जाती है। मगर उनको तो अब इस घर की परवाह ही नहीं, बस अपने ससुराल की ही चिन्ता रहती है। सोचती हैं मैं हूँ पिताजी के पास घर में, इसलिए उनको यहाँ की क्या चिन्ता !

शान्ति : और जब तुम भी चली जाओगी, तब ?

सुशीला : मैं कहाँ जाऊँगी ! मैं तो कहीं भी नहीं जाऊँगी। अपने पिताजी के पास ही रहूँगी।

शान्ति : क्यों, शादी नहीं कराओगी ? ससुराल नहीं जाओगी क्या ?

सुशीला : मैं तो कोई ससुराल-वसुराल, नहीं जाऊँगी। बस यहीं रहूँगी, इसी घर में, अपने प्यारे पिताजी के साथ। मैं तो पिताजी के बिना रहने की बात सोच भी नहीं सकती। एक दिन भी नहीं रही हूँ मैं उनके बगैर आज तक।

[कृष्णदेव प्रवेश करते हैं और सुशीला की बात सुन लेते हैं।]

कृष्णदेव : मगर बेटी, एक दिन तो पिताजी से दूर जाना ही पड़ेगा ! और (ठण्डी साँस भरकर) शायद अब वह समय समीप आ रहा है।

[सुशीला नाराज-सी होकर वहाँ से चली जाती है।]

[शान्ति कृष्णदेव को नमस्कार करके अपनी कुर्सी पर बैठ जाता है। कृष्णदेव भी पास की कुर्सी पर ही बैठता है।]

कृष्णदेव : कहाँ चली गई अब ? पढ़ना नहीं है क्या तुझे आज ?

(सुशीला कोई जवाब नहीं देती। थोड़ी देर सोच कर) सुशीला की बहन पुष्पा, जो पंजगाई मे ब्याही गई है, वह एक अच्छा रिश्ता लेकर आई थी इसके लिए। अपने जँवाई बाबू तहसील में चले गए हैं न कानूनगोह बनकर, उन्ही को जान-पहचान का कोई लड़का है। अच्छा पढ़ा-लिखा है, अभी-अभी डाक्टरी करके हटा है। जमीन-जायदाद बुजुर्गों की बहुत है। लड़के के पिता रिटायर्ड मुंशी हैं। बस केवल परिवार कुछ ज्यादा बड़ा है। पुष्पा कह रही थी, लड़का आजकल दीवाली की छुट्टी मे आठ-दस दिन के लिए घर आया हुआ है शहर से, सो उचित होगा कि लड़के को घर बुलाकर लड़की दिखा दी जाए, बातचीत तय कर ली जाए। अगर उचित लगे तो रिश्ता भी तय कर लिया जाए।

शान्ति : (बड़े गौर से सारी बात सुनकर) तो आपने क्या कहा ?

कृष्णदेव : मैंने सोचकर हामी भर दी। (ठण्डी सांस भरकर) सोचा, बातचीत करने मे हर्ज ही क्या है ! आखिर रिश्ता तो करना ही है। पराया धन है, कब तक अपने पास रखूंगा ! और फिर अच्छे रिश्ते मिलते भी कहाँ हैं आसानी से ! लड़का पढ़ा-लिखा है, घर-बार अच्छा है, तो आनाकानी भी किस बात की ! बस एक इच्छा है कि बेटी जिस घर में जाए, वे लोग केवल रुपए-पैसे के हिसाब से ही बड़े न हों, बल्कि दिल मे, दिमाग से भी बड़े हों, जो मेरी गुणवती लाडली सुशीला की कद्र कर सकें।

शान्ति : (दिल की भावनाओं को दबाते हुए) आप ठीक कहते हैं। पर चिन्ता किस बात की। आपकी बेटी भाग्यशाली है। वे लोग जरूर आपकी अपेक्षाओं के

अनुरूप ऊँचे होंगे ।

कृष्णदेव : देखो, पता चल जाएगा ! परसों शाम चाय पर बुलाया है मैंने । तभी बातचीत करके पता चल सकेगा । हाँ, बेटा, तुम तो शाम को रोज आते ही हो । तुम्हारे यहाँ होने से मुझे जानने-परखने और फैसला करने में सहायता मिलेगी । तुम जरूर आ जाना ।

शान्ति : (स्वयं को नियन्त्रित करते हुए) जी, मैं भला क्या मदद कर सकूँगा आपकी इस मामले में ! मुझे क्या अनुभव, क्या ज्ञान है इन बातों का !

कृष्णदेव : क्यों नहीं ! तुम्हारी अपनी शादी नहीं हुई अभी तक तो इसका मतलब यह तो नहीं कि तुम्हें इन मामलों का कुछ ज्ञान ही नहीं ! बुद्धिमान हो, जाँच-परख तो सही कर सकते हो किसी व्यक्ति के बारे में । वैसे भी अकेले दिमाग का फैसला कई बार गलत भी हो सकता है । दो की राय से जो निर्णय लिया जाए उसमें गलती की सम्भावना कम रहती है ।

शान्ति : जी, यह तो सब मेहरबानी है केवल आपकी मुझ पर जो आप मुझे ऐसे विश्वास के योग्य समझते हो । पर···मैं सोचता हूँ, सुशीला की निजी राय इस मामले मे ज्यादा महत्त्वपूर्ण होगी बजाय किसी बाहर के आदमी के !

कृष्णदेव : तो तुम अभी तक पराया समझते हो अपने आपको ? देखो बेटा, मैं कोई दिखावा नहीं करता किसी बात में । अगर तुम्हे बेटा कहा है, तो मैं दिल से तुम्हें बेटे की तरह प्यार करता हूँ । समझे ! आगे से कभी ऐसी गैरों वाली बात न करना ।

शान्ति : (शर्मिन्दा-सा होकर) जी माफी चाहता हूँ ।

कुछ गलत कह दिया हो। आपने मुझे बेटा माना है, यह मेरे लिए सौभाग्य और सम्मान की बात है।

कृष्णदेव : (मुस्कराकर) तो ठीक है। परसों तुम्हारा यहाँ होना जरूरी है यह मेरा आदेश है।

शान्ति : जी! जैसी आपकी आज्ञा! (उठते हुए) अब मैं चलता हूँ। कल नहीं आ पाऊँगा। कोई आवश्यक काम है।

कृष्णदेव : ठीक है! मगर परसों आना पड़ेगा।

[शान्ति चला जाता है।]

दृश्य आठ

[कृष्णदेव के घर की बैठक का कमरा। सलीके से सजा हुआ। कमरे में कुर्सियों पर कृष्णदेव, शान्ति, कृष्णदेव का जँवाई मधुसूदन, डाक्टर लड़का ज्ञान, तथा उसके पिता और ज्ञान का बड़ा भाई। कुछ अस्पष्ट-सी बातचीत। इतने में सुशीला की बड़ी बहन पुष्पा चाय की ट्रे लेकर आती है, पीछे-पीछे साधारण वस्त्रों में सुशीला भी फल-मिठाई की ट्रे लेकर आती है। सादेपन में भी सुशीला आकर्षक लग रही है। शान्ति मेज को सबके बीच में, मेहमानों के अधिक पास सरकाता है।]

कृष्णदेव : लाओ बेटी, यहाँ रखो!

[पुष्पा अपनी ट्रे टेबल पर रखती है। शान्ति आगे बढ़कर सुशीला से उसकी ट्रे थामकर मेज पर रखता है और पुष्पा के साथ चाय-मिठाई मेहमानों को पेश करने में मदद करता है। सुशीला इतनी देर थोड़ा-सा पीछे हटकर नजरें नीचे किए खड़ी रहती है। सबकी गंभीर निगाहें उसके ऊपर हैं। फिर चाय पकड़ाने के बाद

पुष्पा और सुशीला दोनों वापिस रसोई की ओर चली जाती है। मेहमान चाय पीना शुरु करते है और कृष्णदेव बातों का सिलसिला फिर शुरू करते है।]

कृष्णदेव : (ज्ञान की तरफ मुंह करके) तो बेटा मंगलवार को वापिस जा रहे हो शहर ?

ज्ञान : जी ।

ज्ञान का पिता : यह तो पिछले कल ही जाने वाला था। पर मधुसूदन-बिहारीलाल ने जिद की तो मंगलवार तक रुक गया है।

कृष्णदेव : बहुत अच्छा किया बेटा ! मुझे आप लोगो के दर्शन करने का जल्दी मौका मिल गया।

[थोड़ी देर सब चुप रहते हैं। शान्ति ज्ञान को बड़े गौर से देख रहा है।]

कृष्णदेव : लीजिए मुंशी जी, बर्फी तो खाइए। आप तो कुछ ले ही नहीं रहे। मिठाई खाने से परहेज है क्या ?

(बर्फी की प्लेट उनके आगे बढ़ाता है।)

ज्ञान का भाई प्रेम : मिठाई खाने के तो शौकीन है पिताजी···

बिहारीलाल : (बीच में काटकर) पर घर में अब बेटा डाक्टर बन गया है न, उसकी सख्त हिदायतें जो रहती है अब इस अवस्था में यह खाओ, वह न खाओ···

[सभी ठहाका मारकर हंसते है।]

ज्ञान : पर मैं तो आपके भले के लिए ही कहता हूँ।

शान्ति : ठीक भी है। घर मे डाक्टर होते हुए बीमार होना अच्छा भी नहीं लगता है।

कृष्णदेव : (बात बदलते हुए कुछ क्षणों के बाद) तो मधु बता रहा था कि पढाई खत्म हो गई है अब आपकी।

ज्ञान : हाँ, अब Intership के थोड़े से एक-दो महीने बाकी

हैं। फिर···

कृष्णदेव : फिर तो नौकरी मिल जाएगी।

प्रेम : मगर इसकी नौकरी करने में रुचि ही कहाँ है !

बिहारीलाल : ठीक भी है ! नौकरी में कौन-सा इतना फायदा है। कितना खर्च होता है डाक्टरी की पढ़ाई पर ! और जो तनख्वाह मिलती है डाक्टरों को, क्या वह काफी है उस हिसाब से ?

कृष्णदेव : (हैरान-सा रह जाता है) तो फिर क्या करने का इरादा है, बेटा ?

शान : मैंने तो फैसला कर लिया है, एक अच्छा बड़ा-सा क्लीनिक खोलूँगा, किसी बड़े शहर दिल्ली वगैरा में।

प्रेम : ख्याल बुरा नहीं है।

बिहारीलाल : पर डाक्टर साहब, बड़ा क्लीनिक खोलने के लिए पैसा भी बड़ा ही चाहिए। (एकदम गम्भीर होने का नाटक करते हुए) मैं तुम्हें बता चुका हूँ कि मेरे पास जितना पैसा था, सब तुम्हारी पढ़ाई पर खर्च कर चुका हूँ। अब इससे ज्यादा मुझसे आस न रखना।

प्रेम : और अभी कमला और विमला की शादियाँ भी तो करनी हैं।

बिहारीलाल : हाँ ! पता भी है तुम्हें आजकल लड़के वालों के नखरे कैसे होते हैं ? कितना दान-दहेज देना पड़ता है, तब कहीं कोई ढंग का रिश्ता मिल पाता है ! ···

[कृष्णदेव और शान्ति दोनों हक्के-बक्के से सारा वार्तालाप सुन रहे हैं। मधुसूदन भी हैरान-सा हुआ बैठा सब सुन रहा है।]

शान्ति : डाक्टर साहब, आप बुरा न मानें तो एक राय दूँ।

आप किसी गाँव में क्यों नहीं कोई छोटा अस्पताल खोल लेते ! आपकी पैसों की समस्या भी हल हो जाएगी और साथ ही गाँव के वास्तविक जरूरत-मन्द लोगों की सेवा करने का मौका भी मिल जाएगा।

ज्ञान : मास्टर साहब ! माफ कीजिए मैं आदर्शवादी नहीं हूँ; क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आदर्शों से पेट नहीं भरता। समाज में नाम और यश पाने के लिए पैसा बहुत जरूरी है, और पैसा कमाया जा सकता है बड़े-बड़े शहरों में, जहाँ बड़े-बड़े लोग, पूँजीपति रहते हैं।

बिहारीलाल : इन गाँव वालों के पास यहाँ है ही क्या, गरीबी के सिवाय ! दो जून की रोटी तो बड़ी मुश्किल से कमा पाते हैं, ये क्या खर्च करेंगे दवाइयों पर ?

कृष्णदेव : पर मुंशी जी, इनके दिलों से जो दुआएँ मिलेंगी वह रुपए-पैसे की दौलत से बड़ी दौलत होगी। मेरा तो अपना यह विचार है। हमारे नौजवान बेटे अगर पढ़-लिखकर, योग्य बनकर शहरों में ही चले गए इस तरह, तो हम गाँव वाले अनपढ़, गरीब, मजबूर लोगों की मदद कौन करेगा ?

ज्ञान : क्यों न जाएँ शहरों में ! जो सुख-सुविधाएँ, ऐश्वर्य, आराम, शहरों की जिन्दगी में है, वह मिल सकता है यहाँ ?

शान्ति : माफ कीजिए, अगर हम नौजवान, जिनके कन्धों पर भारत का भविष्य उज्ज्वल बनाने का दायित्व है, यहीं इस तरह केवल अपने ही सुख-ऐश्वर्य के बारे में सोचेंगे, तो कौन देश का, हमारे समाज का पुनर्निर्माण करेगा ?

ज्ञान : (क्रोधित-सा होकर) आप जो हैं मास्टर जी !

आप जैसे आदर्शवादियों का ही जिम्मा है इस देश के सुधार और उद्धार का। (एकदम उठते हुए) चलिए, पिताजी, चलते हैं।

[सभी उठकर चल पड़ते हैं।]

बिहारीलाल : कृष्णदेव जी, आपको मधुसूदन के हाथ अपने फैसले के बारे में सूचित कर देंगे।

[सब चले जाते हैं। थोड़ी देर बाद…]

शान्ति : (अपराधी के से स्वर में) जी, मुझे भी अब इजाजत दीजिए! अँधेरा हो चला है। (हाथ जोड़ता है, कृष्णदेव भी बदले में हाथ जोड़ता है। शान्ति मधुसूदन की तरफ भी अभिवादन की नजर से देखता है, मगर वह उसे घूर कर मुँह दूसरी तरफ फेर लेता है। शान्ति चला जाता है।)

[रात को भोजन के समय जब कृष्णदेव, मधु, पुष्पा और सुशीला सब बैठे हैं तो पुष्पा बात शुरू करती है।]

पुष्पा : कैसे लगे पिताजी आपको वे लोग?

कृष्णदेव : (अन्दर की बात जाहिर न करते हुए) ठीक है, बेटी!

पुष्पा : तो बात तय हो गई?

मधु : (नाराजगी से) बात तय कैसे होती! इनको तो कोई समाजसेवी सुधारक चाहिए, जिसको अपना नहीं दूसरों का जीवन सुधारने की फिक्र हो।

पुष्पा : क्यों क्या हुआ?

मधु : होना क्या है! अपमान करके भेज दिया उनका घर बुलाकर। मैं तो पहले ही बात चलाने के हक में नहीं था, पर बस तुम्हारी जिद की वजह से…

कृष्णदेव : (बात को बिगड़ता देख) इतना नाराज क्यों होते हो बेटा! उनका कोई अपमान नहीं हुआ है। न

ही उनका अपमान करने के उद्देश्य से कोई किसी तरह की बात की गई है। उनके विचारों से हमारा, या हमारे विचारों से उनका सहमत होना कोई आवश्यक तो नहीं। केवल अपने विचार ही प्रकट···

मधु : (गुस्से से बीच में ही) उनको आप विचार प्रकट करना कहते है? पूरा भाषण दे रहा था आपका वह मास्टर! आखिर उसको बीच में टाँग अड़ाने की क्या जरूरत थी इस तरह?

कृष्णदेव : नही बेटा! तुम मास्टर को गलत समझ रहे हो। मैंने ही आग्रह करके बुलाया था उसको। मुझे तो वह समझदार और जिम्मेदार किस्म का व्यक्ति लगता है। और उसने कहा भी क्या गलत! मैं तो पूरी तरह सहमत हूँ उसके विचारों से। (एकदम आवेश में आकर) आखिर लोगों ने पढ़ाने को भी पेशा बना रखा है। पढ़ने-लिखने पर यदि पैसा लगाया तो उसको दुगुना-चौगुना करके वसूल करो दूसरों से! लालची, स्वार्थी कहीं के! यही सीखा इन्होंने पढ़ाई से, यही ज्ञान हासिल हुआ इनको पढ़-लिखकर! ऐसी विद्या किस काम की जो मनुष्य को केवल स्वार्थी बनाए, उसके चरित्र-निर्माण में सहायक सिद्ध न हो! अच्छा ही किया मास्टर जी ने जो निर्भीकता से सच्ची बात कह दी। मुझे कोई रंज नहीं होगा, अगर वे लोग इस रिश्ते को मंजूर नहीं करते!

मधु : आप चिन्ता न करें। वे क्यों लगे यही रिश्ता करने! उनके लिए लडकियों की कोई कमी है क्या! मैं उनको अच्छी तरह जानता हूँ।

कृष्णदेव : अच्छी तरह जानते थे, तब भी तुमने रिश्ते की बात

ऐसे लोगों से की ?

मधु : उनमें बुराई ही क्या है ? अपने लिए सुख व आराम कौन नहीं चाहता ! आपको अच्छी तरह मालूम तो है कि बिना अच्छे दहेज के आजकल रिश्ते अच्छे नहीं मिलते। आदर्श की बातें करना तो बड़ा अच्छा लगता है पर निभाना बहुत मुश्किल होता है। इसी आदर्शवादी मास्टर से ही पूछ लीजिए, वह कर लेगा बिना दान-दहेज के अपनी शादी !

कृष्णदेव : क्यों नहीं करेगा ? इसमें सन्देह की क्या बात है !

मधु : तब तो बहुत अच्छी बात है। कर दीजिए आप सुशीला की शादी उससे। आपके विचारों के अनुरूप है, सीधा-सादा, नि:स्वार्थी, समाज-सुधारक। आप तो पहले ही उससे काफी प्रभावित हैं।

कृष्णदेव : नि:संदेह वह एक अच्छा नौजवान है। होनहार भी है और चरित्रवान है।

मधु : तभी तो मैं सलाह दे रहा हूँ कि जिस योग्य वर की आपको तलाश है वह तो आपके घर में पहले ही मौजूद है, फिर बाहर भटकने की क्या आवश्यकता है ?

[सुशीला वहाँ से चुपचाप उठ कर चली जाती है।]

पुष्पा : बस भी कीजिए अब ! शादी-ब्याह के मामले इस तरह खींचा-तानी, नाराजगी, बहस से तय हो पाते है क्या ! उठिए, नन्दू जाग गया है शायद, उसके रोने की-सी आवाज आ रही थी। चलिए आप उसके पास, मैं अभी उसका दूध लेकर आती हूँ। पिता जी, आपका दूध यहीं ले आऊँ या सुशीला के पास आपके कमरे में भेज दूँ ?

कृष्णदेव : बेटी, तुम बच्चे को दूध पिलाओ जाकर। सुशीला

अपने आप ले आएगी।

दृश्य नौ

[कृष्णदेव बिस्तर पर लेटा हुआ विचारों में खोया हुआ है। उसे नींद नहीं आ रही। वह मधु की बात पर गौर कर रहा है कि मास्टर के साथ ही क्यों नहीं सुशीला का रिश्ता कर दिया जाए। हर लिहाज से वह सुशीला के लिए एक योग्य जीवन-साथी बन सकता है। (अपने आपसे स्वर में) इतना मधुर स्वभाव, ऊंचा चाल-चलन, प्रगतिवादी विचार, होनहार, सभ्य और सुसंस्कृत युवक है, जिसमें निःस्वार्थ भावना है, देश-समाज के सुधार, तरक्की का दिल में जज्बा है। ऐसे नौजवान तो ढूंढने से भी कहाँ मिल पाते हैं और शायद यह ईश्वर की कृपा और सुशीला की अपनी अच्छी किस्मत है कि भगवान ने स्वयं ही ऐसे गुणवान को हमारे घर में भेज दिया। मैं भी कैसा मूर्ख हूँ ! घर में हीरा पड़ा है और मैं बाहर पत्थरों में सिर मार रहा हूँ। मैं जरूर उससे बात करूंगा। मुझे यकीन है वह मुझे न नहीं कह सकता। मेरी बेटी सुशीला भी तो लाखों में एक है।]

[शाम का समय, कृष्णदेव कहीं से वापिस घर आता है।]

कृष्णदेव : सुशीला बेटी, कहाँ हो ?

सुशीला : (अन्दर से) जी, पिताजी ! मैं यहाँ हूँ। (बाहर निकल आती है।)

कृष्णदेव : क्या कर रही थी ! मास्टर जी आज भी नहीं आए क्या ?

सुशीला : (उदास-सी होकर) नहीं ! आपने मना कर दिया है क्या ?

कृष्णदेव : नहीं ! मैं भला क्यों मना करूंगा ! बल्कि मैं तो इन्तजार कर रहा हूँ। आज तीन दिन हो गए। सोच रहा था आज तो जरूर आएंगे।

सुशीला : कहीं घर तो नहीं चले गए ?

कृष्णदेव : मेरे साथ तो ऐसा कोई जिक्र नहीं किया। अब तो मुझे भी चिन्ता होने लगी है। कहीं अस्वस्थ न हो !

सुशीला : तो आप जाकर स्वयं ही क्यों नहीं देख आते ?

कृष्णदेव : हाँ ! यह ठीक है। कल मैं स्वयं ही जाकर देखूँगा। आखिर ऐसी क्या बात हो गई !

[अगले दृश्य में शान्ति का कमरा, मन्दिर के पुजारी के कमरे के साथ। शान्ति कमरे में बैठा कुछ लिख रहा है। शाम का समय है। कमरे के बाहर कदमों की आहट सुन कर शान्ति दरवाजे के पास आकर बाहर झाँकता है और कृष्णदेव पर नजर पड़ते ही हैरान होता है।]

शान्ति : अरे ! नम्बरदार जी आप ! नमस्कार ! आइए-आइए ! (अन्दर ले जाता है)

[कोने में पड़ी कुर्सी को सीधा करके बिठाता है और आप कमरे में बिछी चारपाई पर बैठ जाता है। कमरे में कुर्सी के पास ही एक छोटा-सा मेज भी है तथा अलमारी में एक छोटा ट्रंक है तथा दूसरे खाने में कुछ किताबें और समाचार-पत्र वगैरा पड़े हैं। कृष्णदेव कमरे को बड़ी गौर से देखता है तो शान्ति कुछ शर्म महसूस करता है।]

शान्ति : जी ! यह बहुत ही छोटा तथा साधारण-सा कमरा है। बस रहने भर के लिए ठीक है। देखिए, कुछ भी तो नहीं है कमरे में सिवाय मेरी चारपाई और एक छोटी-सी कुर्सी-मेज के ! आप…आप तो बड़े आदमी हैं, मैं आपको कहाँ बिठा सकता हूँ, क्या आदर कर सकता हूँ आपका यहाँ !

कृष्णदेव : बस-बस, रहने दो। मैं जानता हूँ तुम्हें बहुत बड़ी-बड़ी बातें आती हैं।

शान्ति : (घबरा जाता है, सकपकाते हुए) जी, माफी चाहता हूँ, मैंने गलत कह दिया कुछ ?

कृष्णदेव : गलत नहीं तो क्या ठीक कहा ! अच्छा छोड़ो। पहले यह बताओ, तुम उस दिन के बाद घर क्यों नहीं आए ? पता है आज पूरे चार दिन हो गए हैं तुम्हें आए हुए ? क्या जिम्मेदारी इस तरह निभाई जाती है ?

शान्ति : (हाथ जोड़कर वैसे ही घबराए हुए अपराधी के से स्वर में) जी···मैं सचमुच क्षमा चाहता हूँ आपसे। आप मुझे गलत न समझिए। ऐसी गैर जिम्मेदारी वाली कोई बात नहीं।

कृष्णदेव : फिर और क्या बात है ?

शान्ति : (हिचकिचाते हुए) जी···जी, दरअसल बात यह है कि ··· (नहीं बता पाता)

कृष्णदेव : बताओ, क्या बात है ? सुशीला ने कोई गलती की है या मैंने कुछ कह दिया है ?

शान्ति : नहीं-नहीं, बिल्कुल नहीं। (एक क्षण रुक कर) गलती तो मैंने की है। उस दिन आपके घर से वापिस आकर मैंने सोचा कि शायद वे लोग मेरी बातों से नाराज हो गए हैं। मुझे सचमुच बहस नहीं करनी चाहिए थी। शायद उनका कहना ठीक हो।

कृष्णदेव : (बात काटते हुए) क्या ठीक था उनका कहना ? मैं भी तो उनकी बातों से जरा भी सहमत न था। और जिस तरह तुमने निर्भीक होकर अपनी असहमति उनके झूठे, खोखले, ढोंगी और लालची इरादों के साथ स्पष्ट की, उससे वे नाराज भी हुए हों तो हों क्योंकि सच्चाई हमेशा कड़वी होती

शान्ति : तो क्या आपको बुरा नहीं लगा कि मेरी उस दखलअन्दाजी से शायद बात बनते-बनते बिगड़ गई ?

कृष्णदेव : क्या कहा जो बुरा लगा ? मैं तो खुश हुआ कि जो बातें मुझे कहनी चाहिए थीं, वो तुमने कह दीं। बल्कि गर्व हुआ मुझे तुम जैसे नौजवान पर, जिसमें न केवल उचित सोचने और महसूस करने की बुद्धि है, बल्कि साहस भी है, आत्मविश्वास भी है, जिससे तुम उस सच्ची और सही बात को दूसरों के सामने निडर होकर परिणामों की चिन्ता किए बिना कह भी सकते हो, समझा भी सकते हो।

शान्ति : आप कुछ भी कहें। मुझे तो आत्मग्लानि हो रही है उस दिन से यह सोच-सोचकर कि केवल मेरी वजह से ही सम्बन्ध बनते-बनते बिगड़ गया। मुझे सचमुच इतना हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था आपके पारिवारिक मामले में। आप कुछ भी कहते, आप को हक है, आप सुशीला के पिताजी हैं, मगर··· मगर मैं तो···मैं लगता ही क्या हूँ सुशीला का जो···

कृष्णदेव : हाँ ! यह बात ठीक कही तुमने। दरअसल मैं भी यही सोचकर तुमसे बात करने आया हूँ।

शान्ति : (कुछ न समझते हुए) जी, मैं समझा नहीं आप क्या कहना चाहते हैं ?

कृष्णदेव : मैं कहना चाहता हूँ कि तुम सुशीला के सब कुछ लग सकते हो, अगर मेरा प्रस्ताव मंजूर हो तुम्हें !

शान्ति : (हैरान) जी ? प्रस्ताव ? कैसा प्रस्ताव ?

कृष्णदेव : शादी का ! मैंने बहुत सोच-समझ कर यह फैसला किया है कि अगर तुम्हें कोई एतराज न हो तो मैं सुशीला का हाथ तुम्हारे हाथ में देकर अपने को

धन्य समझूंगा।

शान्ति : (विश्वास न करते हुए) जी···जी···आप यह क्या कह रहे हैं !

कृष्णदेव : क्यो, तुम्हें आपत्ति है कोई ? मेरी सुशीला बेटी क्या तुम्हारे योग्य नहीं ?

शान्ति : नहीं-नहीं, मेरा यह मतलब नही था। मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि मैं इस सम्बन्ध के योग्य नहीं हूँ। सुशीला बड़े घर की बेटी है और मैं तो···मैं तो एक छोटा-सा मास्टर हूँ बस···

कृष्णदेव : (मुस्कराते हुए) मगर मैं जानता हूँ कि हमारे छोटे-से मास्टर जो दिल और दिमाग के बहुत बड़े हैं।

[उसका प्यार से कन्धा थपथपाते है।]

शान्ति : यह तो केवल आपका प्यार व कृपा है मुझ पर जो आप मेरे बारे में ऐसा सोचते हैं।

कृष्णदेव : तो अब कृपा आप भी कर दीजिए हम पर इस रिश्ते के लिए हाँ कह कर ! मंजूर है न ?

शान्ति : जी, यह तो परम सौभाग्य है जो आपने मुझे इस योग्य समझा।

कृष्णदेव : शाबास बेटा ! मुझे तुमसे यही उम्मीद थी कि तुम मुझे निराश नही करोगे। सदा सुखी रहो। (उठते हुए) तो अब मैं तुम्हारे माता-पिता के पास यह शादी का प्रस्ताव लेकर जा सकता हूँ !

शान्ति : जी, वह तो ठीक है, लेकिन सुशीला की सहमति ले ली है क्या आपने ?

कृष्णदेव : अरे बेटा, कैसी बातें करते हो ! सुशीला मेरी बेटी है, मैं उसकी पसंद-नापसंद जानता हूँ। वह न थोड़े ही करेगी मेरे किए हुए रिश्ते के लिए ! तुम उसको अभी तक इतना भी नहीं समझे ?

शान्ति : कुछ भी हो। मेरा ख्याल है, उसे भी बराबर मौका दिया जाना चाहिए अपनी सहमति-असहमति प्रकट करने का।

कृष्णदेव : (मुस्कराते हुए) अच्छा, मास्टर साहब, जैसी आपकी आज्ञा!

[कृष्णदेव खुश होकर चला जाता है। शान्ति बाहर तक छोड़ने आता है। कृष्णदेव मन्दिर से निकलते-निकलते भगवान का धन्यवाद करता है।]

[शान्ति के मन में भी लड्डू फूटते हैं, उसे इतनी बड़ी खुशी पर विश्वास नहीं हो पाता। जिस बात को वह सपने में देखने से भी घबरा रहा था, उसे इस तरह खुली आँखों से प्रत्यक्ष देखकर उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह इस खुशी को स्वयं अकेले किस तरह अपने में ही समेट ले? कोई ऐसा अतरंग मित्र भी तो नहीं जिसको जाकर दिल की बात बताई जाए।]

[कृष्णदेव के घर का दृश्य। रात का समय। सुशीला खाना लगाती है दोनो के लिए।]

सुशीला : पिताजी, अचार का डिब्बा निकालूं? अचार लेंगे आप?

कृष्णदेव : नहीं बेटी रहने दे। आ जा, तू भी अब, खाना शुरू करें। मेरा तो आज कुछ मीठा खाने को जी कर रहा है।

सुशीला : पर मीठा तो मैंने कुछ बनाया ही नहीं। आप पहले कह कर जाते तो बना कर रखती।

कृष्णदेव : (मुस्कराते हुए) पहले मुझे को क्या पता था कि वापिस आकर मीठा खाने को जी करेगा!

सुशीला : तो अभी बना दूं क्या ?

कृष्णदेव : नहीं-नहीं, रहने दे। वह शक्कर का डिब्बा ही उठा ला।

[सुशीला शक्कर का डिब्बा लाकर रख देती है और स्वयं भी कृष्णदेव के पास नीचे जमीन पर बिछी चटाई पर बैठ कर खाना शुरू कर देती है। दोनों खाना खाते हैं। कुछ देर दोनों चुप हैं, मगर इसी बीच कृष्णदेव बार-बार सुशीला को प्यार-भरी नजर से देखता है व मुस्कराता है। अपनी कल्पना में उसे सुशीला और शान्ति दोनों विवाहित जोड़े के रूप में नजर आ रहे हैं। सजी-सँवरी सुशीला बहुत सुन्दर नजर आ रही है और कृष्णदेव उस रूप में उसे देखकर खुश हो रहा है। इस तरह अपनी ओर पिताजी को देखते व बिना बात के मुस्कराते देख कर सुशीला हैरान होती है।]

सुशीला : क्या बात है पिताजी, मुझे इस तरह देख-देखकर मुस्करा क्यों रहे हैं आप ?

कृष्णदेव : तू बहुत भली दिख रही है न, इसलिए।

सुशीला : मगर आज ही ऐसी क्या बात हो गई जो मैं आपको अचानक बहुत भली नजर आने लगी ? रोज क्या आपके पास ही नहीं रहती मैं ?

[कृष्णदेव ठण्डी साँस भर कर अचानक गम्भीर हो जाता है।]

कृष्णदेव : न जाने अब और कितने दिन रह पाएगी मेरे पास ! पराया धन है, कब तक रख सकता हूँ तुझे अपने पास ! (ठण्डी साँस भर कर उदास हो जाता है।)

सुशीला : आप तो ऐसे उदास हो रहे हैं जैसे मुझे कल ही

ससुराल भेजना हो।

कृष्णदेव : वह कल भी अब बहुत दूर नहीं बेटी ! (एक क्षण चुप रहकर) क्यों लड़कियो को भगवान ने या इस समाज ने पराया धन बनाया ? मेरा वश चले तो समाज के इस रिवाज को बदल ही डालूं। कलेजे के टुकड़े को, जिसके बिना एक दिन भी गुजारना असम्भव-सा लगे, अचानक उसे एक दिन पराए हाथों मे सौंपते हुए माँ-बाप के दिल पर क्या गुजरती है, यह पत्थरदिल समाज क्या जाने ?

सुशीला : (खुश होते हुए) बस ठीक है पिताजी ! आप भी मुझसे अलग नही होना चाहते, मैं भी आपको छोड़ कर नही जाना चाहती। बात खत्म। रहने दीजिए समाज को, हम समाज की परवाह क्यों करें ?

[कृष्णदेव कोई जवाब नही देता। सुशीला उसके चेहरे की तरफ देखती है।]

सुशीला : क्यो ठीक है न पिताजी ?

कृष्णदेव : (ठण्डी साँस भरकर) ठीक कैसे है मेरी लाड़ली ! समाज की परवाह कैसे नहीं करेंगे ! हमें इसी समाज मे रहना है न ? हमारी तरह अगर सभी अपनी मनमानी करने की सोचें तब तो समाज में अव्यवस्था फैल जाएगी। और फिर ये सामाजिक बन्धन तो परायो को अपना बना नए रिश्ते कायम हो जाते हैं, ऐसे I चाहिए। (जबरदस्ती हुए मैं तो यूं ही भावुक हो गया

सुशीला : (बुझे-से स्वर में) तो क्या दें

कृष्णदेव : पड़ेगी बेटी

सुशीला : न भी

क्षण रुककर) वैसे मैं तो चाहती हूँ न हो करें तो अच्छा है।

कृष्णदेव : क्यों, क्या वह रिश्ता तुझे पसन्द नहीं ?

सुशीला : (नजरें नीचे झुकाए हुए) आपको पसन्द है क्या ?

कृष्णदेव : मेरी बात छोड़, तू अपनी बता ! जिन्दगी तुझे बसर करनी है, उनके साथ या मुझे ?

सुशीला : मुझे तो पसन्द नहीं है।

कृष्णदेव : (दिल ही दिल में खुश होते हुए, पर बाहर से हैरानी प्रकट करके) क्यों ? इतना अच्छा रिश्ता है। क्या कमी है उन लोगों में ? घर-वर दोनों ही अच्छे हैं। लड़का डाक्टरी पास कर चुका है, शहर में काम करना चाहता है, घर वाले भी अच्छे अमीर हैं। किसी चीज की कमी नहीं है। फिर भला तुझे क्यों पसन्द नहीं ?

सुशीला : आप स्वयं ही तो कह रहे थे उस दिन जीजा जी से, वे लोग आपको स्वार्थी और लालची किस्म के लगे। फिर ऐसी जगह आप मेरी शादी क्यों करना चाहते हैं ? क्या भूल गए आप, उस दिन आपने यह सब कहा था !

कृष्णदेव : (सकपका जाता है जैसे कोई चोरी पकड़ी गई हो) नहीं···नहीं···वह तो यूँ ही···खैर, उस बात को छोड। तू अपनी पसन्द बता, तुझे पसन्द है क्या वह रिश्ता ?

सुशीला : नहीं ! मुझे भी पसन्द नहीं है।

कृष्णदेव : (घबराया-सा) मगर बेटी तूने तो आज तक बताया ही नहीं कि तुझे वे लोग अच्छे नहीं लगे।

सुशीला : आपने पूछा ही कब ?

कृष्णदेव : (उसी लहजे में) राम-राम ! अगर उस दिन मास्टर जी बीच में न पड़ते तो शायद मैं यह रिश्ता उसी

समय पक्का कर देता।

सुशीला : तो क्या होता, मैं मंजूर कर लेती अपनी किस्मत मानकर उसे।

कृष्णदेव : तब तो यह बड़ा जुल्म होता!

सुशीला : (व्यंग्यात्मक हँसी में) जुल्म कैसा पिताजी! मैं लड़की हूँ न! यहाँ लड़कियों को बोलने का हक और मौका दिया ही कब जाता है? यह तो आप हैं एक समझदार और पढ़े-लिखे पिता जिन्होंने मेरी पसन्द-नापसन्द पूछ ली, वरना लड़कियों के सुख-दुख, खुशी-गम, भले-बुरे का फैसला शादी से पहले उसके माता-पिता, बड़े भाई, रिश्तेदार करते हैं और शादी के बाद सास-ससुर, पति, जेठ वगैरा करते हैं। जीवन उसका अपना होता है, मगर जीने का हक दूसरों की मर्जी से मिलता है उसे, जिन्दगी दूसरों की पसन्द के अनुसार गुजारनी पड़ती है उसे।

कृष्णदेव : मानता हूँ, तुम्हारी बात सत्य है। हमारा सामाजिक ढाँचा ऐसा ही है। मगर सामाजिक जागृति लाई जा सकती है। जो रीति-रिवाज, शर्तें अनुचित हैं समाज में, हमारे घरों में, उनको दूर करने का प्रयत्न किया जा सकता है।

सुशीला : मगर यह प्रयत्न करेगा कौन?

कृष्णदेव : सभी को करना चाहिए मिलकर। बल्कि मैं तो कहूँगा हमारी नयी पीढ़ी तुम जैसे पढ़े-लिखे नौजवान, लड़के-लड़कियों को तो इसमें ज्यादा योगदान देना चाहिए।

सुशीला : मगर हम लड़कियाँ कर ही क्या सकती हैं?

कृष्णदेव : करना चाहें तो क्या नहीं कर सकतीं? कम-से-कम गलत बात के, अन्याय के खिलाफ आवाज तो उठा

सकती है न। औरों के लिए नहीं तो अपने अच्छे-बुरे के लिए तो जुबान खोलनी चाहिए, जहे। यह कोई बात हुई कि मैं तुम्हारा पूरी जिन्दगी भर के लिए कोई गलत फैसला कर दूं और तुम केवल इसलिए कि एक लड़की हो, उसे अपनी किस्मत समझकर मान लो !···नहीं बेटी, नहीं, यह सरासर गलती है। याद नहीं तुम्हें महात्मा गांधी ने कहा था, अन्याय सहने वाला भी उतना ही कसूरवार है जितना अन्याय करने वाला।

कल तुम ससुराल जाओगी, वहां पराए लोग होंगे, उनकी रुचियां, स्वभाव तुमसे भिन्न हो सकते हैं, उनकी अपेक्षाएं तुमसे बहुत ऊंची हो सकती है और अगर तुम उन्हें पूरा करने में असफल रहीं तो हो सकता है, वे तुम्हारे साथ मनचाहा व्यवहार करें जो तुम्हें अच्छा न लगे। आज जब तुम अपने माता-पिता के घर बाप द्वारा किए जा रहे अपने मनमाने फैसले के खिलाफ ही मुंह खोलने से कतरा रही थीं, तो वहां तो सब कुछ तुम किसी भी सीमा तक चुपचाप सहन कर जाओगी।

सुशीला : तो इसमें कौनसी नई बात हो गई पिताजी ! ऐसा तो हमारे समाज में होता ही रहा है, हो रहा है। मेरे साथ भी ऐसा ही हो गया तो कौनसा अचम्भा हो जाएगा। बाकी लड़कियों की तरह मैं भी क्या कर सकती हूं ? क्या आप यह कहना चाहते हैं कि मैं उनके विरुद्ध विद्रोह करूं, अगर वे मेरे साथ ऐसा व्यवहार करें ?

कृष्णदेव : ऐसा मैंने कब कहा कि तुम्हें उनके खिलाफ कोई विद्रोह करना चाहिए ? विद्रोह करना तो नारी स्वभाव की शालीनता के खिलाफ है। अन्याय के

खिलाफ आवाज उठाना गलत नही है, मगर गलत तरीके से आवाज उठाना गलत है। कोई भी समस्या, मतभेद केवल झगड़े खडे करके, अशान्ति, कलहपूर्ण तरीकों से या कटु विद्रोह करके ही तो नही सुलझाए जा सकते। मनुष्य अगर समझदारी, दूरदर्शिता से काम ले, संयम, साहस और सहनशीलता का दामन न छोड़े, तो बड़ी-से-बड़ी समस्याएँ भी शान्तिपूर्ण तरीको से सुलझाई जा सकती हैं। अगर हम अशान्ति पैदा करेंगे, विद्रोह खडे करेंगे, तो किसके खिलाफ? अपने ही लोगों के खिलाफ न! तो इसमे नुकसान भी हमारा ही हुआ। महात्मा गाधी अपनी बात, न्याय की बात, सच्चाई की बात जब गैरो को भी, अंग्रेज शासको को भी, जिन्होने अनगिनत अन्याय किए, हम पर सौ वर्ष से भी ज्यादा शासन किया, उनको भी अपने साहस, सहनशीलता, आत्मविश्वास और सच्चाई के साथ शान्तिपूर्ण तरीके से, अहिंसापूर्ण तरीके से समझाने मे सफल हो सके, तो हम क्यो नही अपने घर के, आस-पड़ोस और समाज के छोटे-मोटे झगडे, आपसी मतभेद या परस्पर अन्याय को बैठकर, एक-दूसरे की बात सुनकर, समझाकर दूर कर सकते और···

सुशीला : बस-बस पिताजी! आपने तो बड़ा लम्बा-चौड़ा भाषण दे दिया जरा-सी बात पर। मेरे कहने का मतलब यह तो नही था कि मैं वहाँ जाकर झगड़े करूँगी, अशान्ति फैलाऊँगी। क्या आपको अपनी बेटी के स्वभाव, आचरण पर भरोसा नही? आप निश्चिन्त रहिए पिताजी, आपकी बेटी कभी भी ऐसा आचरण नही करेगी, जिससे आपकी अपेक्षाओं को ठेस पहुँचे।

कृष्णदेव : शाबास बेटी ! तुमसे यही उम्मीद थी। मुझे पूरा भरोसा है तुम पर !

सुशीला : (बाजू पकड़कर, जबरदस्ती उठाते हुए) ठीक है, अब उठिए और सोने के लिए अपने कमरे में जाइए। मालूम है, कितनी रात बीत गई है ?

कृष्णदेव : अरे हाँ ! (हैरान होकर) ग्यारह बज रहे होंगे शायद ! (चलने लगता है, फिर अचानक पीछे मुड़ कर) पर बात असली तो बीच में रह गई······ वो···

सुशीला : (बीच में टोककर) अब कुछ नहीं। सो जाइए अब, कल क्या दिन नहीं होगा ?

कृष्णदेव : अच्छा बाबा, ठीक है। सुबह बात करेंगे। तू भी सो जा अब ! (दोनों अपने-अपने कमरे में चले जाते हैं। दूर से कहीं कुत्ते के भौंकने की आवाज सुनाई देती है।)

[अगली सुबह नौ-दस बजे का समय। सुशीला फूलों की क्यारियों में पानी दे रही है, घास वगैरा निकालने के बाद। कृष्णदेव हुक्के में चिलम भरकर आंगन में पीने बैठते हैं।]

कृष्णदेव : सुशीला बेटी, बस कर। थक भी नहीं जाती तू ! सारा दिन लगी ही रहती है कुछ-न-कुछ करने। सोचती होगी, शायद थोडे दिनों की मेहमान हूँ, जितना सजा-सँवार लूँ बाप के घर को, उतना ही अच्छा है, बाद में कौन जाने इतना वक्त कभी मिला करेगा या नहीं !

सुशीला : (पानी देना वहीं छोड़कर, खतम करके ही) ऊँ हूँ, पिताजी, फिर आपने वही बात छेड़ दी ! और कोई बात नहीं है क्या ?

कृष्णदेव : और क्या बात हो सकती है, जवान बेटी के बारे में भला ! चल, आ, इधर आ ! मेरे पास बैठ !

सुशीला : (हाथ धोकर पोंछती है) आती हूँ। अन्दर से आपकी वह सफेद कमीज और सुई-धागा ले आऊँ। बटन टूट गया था, नया टांक दूं वहां। (अन्दर जाती है और कमीज, बटन, सुई, धागा, कैंची वगैरा लेकर आती है।)

कृष्णदेव : अरे बेटा, छोड़ यह सब ! ठीक है यह ऐसे ही।

सुशीला : हां-हां, ठीक है ऐसे ही। अभी तो मैं हूं, जब मुझे भेज दोगे, तब तो फटे-पुराने पहनकर भी हाट-बाजार जाया-आया करोगे। है न ?

कृष्णदेव : तो क्या हो गया ! मुझे कोई निकाल देगा अगर मैं मैले-फटे पहनकर भी चला जाऊँ किसी के पास ! हां, तेरे ससुराल नहीं आऊँगा ! तू शायद निकाल दे। (मुस्कराता, है सुशीला भी मुस्कराती है) ठीक है न ?···अच्छा, छोड़। कल रात तू कह रही थी न कि तुझे वे लोग अच्छे नहीं लगे, जिनका रिश्ता आया था। तो फिर बता तुझे कैसे लोग अच्छे लगते हैं। मैं भी तो सुनूं जरा।

सुशीला : जो स्वार्थी न हों, कपटी न हों, लालची न हों। बेशक अमीर न हों, बड़े ऊँचे अफसर न हों, मगर शरीफ, सीधे, सच्चे और निश्छल हो, जो इन्सान की कद्र पैसे-दौलत से ज्यादा करते हो।

कृष्णदेव : (एकदम मौका संभालते हुए) यानी अपने मास्टर शान्तिस्वरूप जैसे !

सुशीला : अरे हां, आप कल उनको मिलने गए थे। क्या हुआ उनको, वो आते क्यों नहीं अब ?

कृष्णदेव : पहले तू मेरे सवाल का जवाब दे। तुझे मास्टर जी जैसे व्यक्ति पसन्द हैं न ?

सुशीला : हाँ, आपको भी तो पसन्द है।

कृष्णदेव : मुझे क्यों बीच में ले आती है, मैं तेरी पसन्द पूछ रहा हूँ।

सुशीला : कह तो रही हूँ हाँ, ऐसे स्वभाव वाले लोग मुझे अच्छे लगते हैं।

कृष्णदेव : मैं बाकी लोगों की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं पूछता हूँ, तुझे अपने ये मास्टर जी अच्छे लगते हैं या नहीं ?

सुशीला : अच्छे लगते हैं तभी तो पढ़ती हूँ उनसे। कितना अच्छा पढ़ाते हैं, सारा समझ में आ जाता है।

कृष्णदेव : अब मेरी बात भी समझने की कोशिश कर। बुद्धू लड़की है बिल्कुल। आज से तेरी पढ़ाई बन्द।

सुशीला : (हैरान होकर) क्या ? पढ़ाई बन्द ! मगर क्यों ?

कृष्णदेव : इसलिए कि मैं तेरे रिश्ते की बात मास्टर जी के साथ पक्की करने जा रहा हूँ।

सुशीला : (एकदम हैरान होकर) क्या ? मास्टर जी के साथ ?

कृष्णदेव : क्यों, अभी तो तूने कहा था, मास्टर जी तुझे बहुत पसन्द हैं।

सुशीला : (शरमा और घबरा जाती है) वह तो मैंने यूँ ही…

[कमीज को वहीं छोड़ शरमा कर अन्दर भाग जाती है। कृष्णदेव उसकी लाजमिश्रित खुशी को भाँप कर मुस्करा देते हैं।]

[दोनों की शादी हो जाती है। साधारण रीति से। कोई ज्यादा सजावट, शोर वगैरा नहीं। दान-दहेज के नाम पर कुछ नहीं लिया जाता।]

दृश्य दस

[शान्ति के घर का दृश्य। नई-नई शादी होने की वजह से लिपा-पुता थोड़ा सजा-सँवरा घर। सुशीला नई दुल्हन की तरह सजी है और मायके जा रही है। शान्ति भी साथ जा रहा है। शान्ति सूटकेस लेकर कमरे से बाहर निकलता है। ड्योढ़ी में खड़ी सुशीला के साथ उसकी सास और देवरानी बातें कर रही हैं जो सुस्पष्ट हैं। अन्दर, कमरे से निकलते हुए शान्ति बाबूजी के कमरे की तरफ झाँककर आवाज लगाता है।]

शान्ति : बाबूजी, कहाँ हैं आप?

[बाबूजी रसोई की तरफ से बाहर निकलते हैं। उधर अपने कमरे से श्याम भी साफ-सुथरे कपड़े पहनकर निकलता है।]

ठाकुरदास : हाँ, बेटा शान्ति।

शान्ति : अच्छा बाबूजी, अब चलें। साँझ पड़ रही है, अभी दरिया पार करना है। (सूटकेस रखकर उनके पाँव छूता है। ठाकुरदास आशीर्वाद देते हैं)

ठाकुरदास : हाँ-हाँ, जाओ।

[सुशीला थोड़ा-सा घूँघट निकाले उनके पाँव छूती है। ठाकुरदास उसे भी आशीर्वाद देते हैं।]

ठाकुरदास : शान्ति बेटा, बहू को वापिस लाने की जल्दी मत करना। इसके पिताजी अब इसके बिना अकेले रह गए हैं। उनको इसके बिना रहने की आदत नहीं है न। जब तक उनका जी चाहे, अपने पास ठहरा लें। बेटी के बिना उनका दिल नहीं लगता होगा।

शान्ति : जी, अच्छा बाबूजी!

माँ : (बीच में ही) मगर यहाँ हमारा दिल भी तो नहीं लगेगा इस बेटी के बिना।

ठाकुरदास : क्यों जिद करती हो शान्ति की माँ। हमारे पास

छोटी बहू जो है और श्याम भी है यहां, हम उनकी तरह अकेले तो नहीं हैं न ।

श्याम : जी नहीं, मैं नहीं हूँ । मैं तो भैया-भाभी के साथ जा रहा हूँ ।

ठाकुरदास : मगर कहां ?

श्याम : भैया के ससुराल और कहां ?

[मणि एक तरफ मुंह करके मुस्कराती है ।]

[शान्ति थोड़ा सकपका जाता है, फिर जबरदस्ती करता है ।]

शान्ति : हां-हां, क्यों नहीं । चलो, तुम भी चलो ।

मां : अरे भैया के लाड़ले, अपनी ससुराल तो जाता नहीं, तब तो तेरी लाख मिन्नतें करनी पड़ती हैं और यहां अपने आप ही तैयार होकर खड़ा है । (मुंह बनाकर नकल उतारते हुए) मैं तो भैया के ससुराल जाऊँगा ! शर्म भी आती है तुझे, इतना बड़ा हो गया, शादी भी हो चुकी अब तो । बात को समझा कर जरा ।

सुशीला : भेज दीजिए न मां जी ! चलिए देवर जी आप हमारे साथ ।

मां : नहीं बेटी, तुम लोग जाओ । अभी तो नई-नई शादी हुई है । शान्तिस्वरूप के पास थोड़ी छुट्टियां है । वह तुम्हें ले जाएगा और लिवा लाएगा । बाद में कभी जब शान्ति घर मे न हुआ या छुट्टी न मिली तो देवर ही जाएगा भाभी को लाने, ले जाने ।

श्याम : *(गुस्से में)* नहीं, मैं कभी नहीं जाऊँगा । कहीं नहीं जाऊँगा । सब अपनी मर्जी चलाते है मुझ पर । ठीक है, मैं भी अपनी मर्जी चलाया करूंगा । (गुस्से में पैर पटकता वापिस घर के अन्दर चला जाता है ।)

सुशीला : (उसके गुस्से से थोड़ा घबरा जाती है, फिर धीमी आवाज में कहती है) आने देती न मां जी आप देवर

जी को। पिताजी भी बहुत खुश होते। खामख्वाह नाराज कर दिया आपने इनको।

मां : इसकी आदत ही ऐसी है बेटी। इतना बड़ा जरूर हो गया है मगर इसकी अकल और आदतें अभी भी बच्चों वाली हैं। इस बच्ची पर (मणि की तरफ देखकर) कभी-कभी तरस आता है। इतनी अच्छी, सुन्दर, सुशील पत्नी मिली है भगवान की दया से इसको, पर इसे परवाह ही नहीं। खैर छोड़। मैं भी क्या घर का रोना ले बैठी। जाओ तुम लोग, अब देर न करो। अंधेरा होने से पहले पहुंच जाना। समधी जी चिन्ता करेंगे नहीं तो।

[शान्ति और सुशीला दोनों झुककर मां के पांव छूकर आशीर्वाद लेते हैं। मां सुशीला को गले लगाकर प्यार करती है। मणि जेठ-जेठानी दोनों के पैर छूती है। सुशीला और मणि दोनों गले मिलती हैं।]

मणि : (धीरे से) जल्दी आना दीदी! अब मेरा दिल आपके बिना नहीं लगेगा।

सुशीला : हां, मैं जल्दी आऊंगी।

[शान्ति और सुशीला दोनों चले जाते हैं। खेतों, पगडंडियों के रास्तों से होते हुए दोनों दरिया के घाट पर पहुंचते हैं। मगर उनके पहुंचने से पांच मिनट पहले ही किश्ती किनारा छोड़कर दूसरे किनारे तक सवारियां पहुंचाने चली जाती है। सांझ ढलने का समय है। अब किश्ती दूसरे किनारे से वापिस आने तक बैठकर इन्तजार करने के सिवाय और कोई चारा नहीं है। इसलिए दोनों किनारे पर घास पर पास-पास बैठ जाते हैं।

आसपास और कोई नही है। कुछ देर तक दोनो चुप रहते हैं। छोटे-छोटे पास पड़े पत्थर शान्ति पानी मे फेंकता जाता है। फिर कहता है।]

शान्ति : क्या सोच रही हो ?

सुशीला : जी, कुछ नही।

शान्ति : शुक्र है, जी ही कहा केवल। मास्टर जी नही कहा।

सुशीला : क्यो, मास्टरजी नही कहना चाहिए अब मुझे ?

शान्ति : अब भी केवल मास्टरजी ही हूँ मैं तुम्हारे लिए।

[सुशीला शरमा कर नजरें नीची कर लेती है।]

शान्ति : (थोड़ी देर तक अब सुशीला कुछ नहीं कहती तो शान्ति फिर कहता है) फिर खामोश हो गई। क्या बात है, बात नही करना चाहतीं क्या ? नाराज हो क्या मुझसे ?

सुशीला : (सकपका जाती है) नही तो मैं नाराज क्यों होऊँगी भला आपसे !

शान्ति : इसलिए कि शायद तुम सोचती होओगी कि वह डाक्टर वाला रिश्ता मैंने जान-बूझकर नही होने दिया। क्यो ? ठीक है न ?

सुशीला : (थोड़े शरारती मूड से) मुझे क्या पता ?

शान्ति : इसका मतलब तुम यही सोचती हो। (गम्भीर होकर) नही, सुशीला यह गलत है। तुम्हारी सौगन्ध। मैंने जान-बूझकर ऐसा कुछ नही किया। सच बताऊँ, मैं चाहता तुम्हें जरूर था। तुम्हारे गुणों, स्वभाव और समझदारी ने मुझे शुरू से ही आकर्षित कर दिया था, मगर यकीन करो, मेरी चाहत इतनी स्वार्थी और बेईमान नही थी कि मैं तुम्हें मिलने वाले सुख से वंचित कर देता। मैं तो यही चाहता

था कि तुम्हें दुनिया का, जीवन का हर सुख मिले।

सुशीला : (उसकी ओर प्यार से देखते हुए) अरे, आप तो गम्भीर हो गए! मेरे कहने का यह मतलब तो नहीं था। मैं तो खुश हूँ कि वहाँ मेरा रिश्ता न हुआ।

शान्ति : (उसी गम्भीर लहजे में मगर प्यार से, उसके करीब आते हुए) मैं जानता हूँ शीलू मेरा ओहदा डाक्टर जितना बड़ा नहीं है, हम शहर में सुविधाओं में रहने वाले लोग नहीं हैं, अमीर नहीं हैं। और यह भी जानता हूँ कि तुम बड़े घर की बेटी हो। मगर··· मगर मैं पूरी कोशिश करूँगा कि तुम्हें मेरे छोटे से घर में भी पूरा सुख मिले, प्यार मिले, इज्जत मिले।

सुशीला : बस, फिर इसके सिवाय मुझे और चाहिए भी क्या?

शान्ति : मेरे माता-पिता से मिलकर तुम्हें जरूर लगा होगा कि वे बड़े निश्छल व सरल स्वभाव के हैं। जैसे बाहर वैसे ही अन्दर से मीठे मधुर स्वभाव वाले हैं। बहुत प्यार करेंगे तुम्हें वो। मणि भी तुम्हें बड़ी बहन की तरह प्यार व आदर करेगी। बहुत अच्छी और भोली लड़की है वह। बस, एक अपना श्याम है, जिसकी वजह से मैं कभी-कभी चिन्तित हो जाता हूँ। अपनी नासमझी के कारण कभी-कभी बड़ों से भी अभद्र व्यवहार कर देता है वह। बहुत समझाया माँ-बाबूजी ने, पर थोड़ी देर के लिए असर होता है, फिर वैसे की वैसी नादान हरकतें कर देता है। बस मुझसे थोड़ा डरता है केवल।

सुशीला : पर आपको प्यार भी बहुत करते हैं शायद।

शान्ति : यही तो बात है। तभी तो मैं उसे सख्ती से डाँटता भी नहीं। कोई कठोर कदम नहीं उठा सकता उसे सुधारने के लिए। तभी तो बहुत सोच-समझ कर शादी की थी उसकी कि शायद उसकी लापर-

वाह हरकतें सुधर सकें, कुछ अक्ल आ जाए।

सुशीला : (शरारती मूड में प्यार से उसे देखते हुए।) क्या शादी करके सबको अक्ल आ जाती है ?

शान्ति : (उसका मतलब न समझते हुए) औरों को शायद आ ही जाती होगी, पर मेरे भाई पर कोई असर न हुआ शादी का। कभी-कभी तो सोचता हूँ, अपने स्वार्थ के लिए हमने उस लड़की के साथ अन्याय किया है उसको इसके पल्ले बाँध कर। (ठण्डी साँस भर कर) अब तो समझौता कर लिया होगा बेचारी ने इसे अपनी किस्मत मान कर !

सुशीला : आप इतनी चिन्ता क्यों करते हो, सब ठीक हो जाएगा।

शान्ति : तुम्हीं कोई चमत्कार कर दो अब तो अलग बात है, वरना तो सब हार चुके हैं।

सुशीला : ठीक है, मैं कोशिश करूँगी। आप निराश क्यो होते हैं ?

शान्ति : पर कही मामला उल्टा न पड़ जाए। वह मैं बर्दाश्त न कर पाऊँगा।

सुशीला : कैसा उल्टा ?

शान्ति : यही कि बात समझने की बजाय वह कहीं तुम्हारा भी अपमान करे, तुम्हारे लिए कोई परेशानी पैदा करे।

सुशीला : ऐसा नही होगा ! अगर हुआ भी तो क्या ! जैसा वह आपका भाई, वैसा ही मेरे लिए। जब बाकी सारे बर्दाश्त कर रहे हैं, तो क्या मैं नहीं कर सकती ?

शान्ति : नही ! यही तो कमजोरी है हम सबकी कि हम सब एक-दूसरे को देख कर उसकी गलत-सही हरकतें सहन करते जा रहे हैं और वह सुधरने की बजाय बिगड़ता जा रहा है। तुम्हारे साथ उसने कोई ऐसी

हरकत की तो मुझे जरूर सख्ती करनी पड़ेगी।

सुशीला : वह नौबत नहीं आएगी, आप निश्चिन्त रहें। लो किश्ती भी आ पहुँची। चलिए उठिए, चलें।

[दोनों किश्ती में बैठ जाते हैं। कुछ और सवारियाँ भी किश्ती में बैठी हैं। किश्ती में बैठा मल्लाह चप्पू चलाता है, किश्ती चल पड़ती है। दूर से कहीं गाने की आवाज सुनाई देती है।]

[शान्ति और सुशीला दोनों कृष्णदेव के घर पहुँच जाते हैं। झुरमुट अँधेरा हो रहा है। घर में अन्दर से कुछ बच्चों की और औरतों की अस्पष्ट-सी आवाजें सुनाई देती है। शान्ति और सुशीला अभी आँगन में पहुँचने ही वाले होते हैं, जब अन्दर से ऊँची आवाज सुनाई देती है।]

पुष्पा : लालटैन की बत्ती कहाँ पड़ी होगी पिताजी?

कृष्णदेव : अरे बेटी, सुशीला से पूछो, भला मुझे इन चीजों का क्या पता?

लीला : ओहो पिताजी, कहाँ, किस ध्यान में खोए हो आप? (कृष्णदेव बाहर आँगन में हुक्का पी रहा होता है) सुशीला अब ससुराल चली गई है। अब यह सारे पते आपको स्वयं रखने पड़ेंगे।

कृष्णदेव : (एकदम जैसे होश में आते हुए) अरे हाँ-हाँ, मैं तो भूल ही गया था। सुशीला तो यहाँ है नहीं। ढूंढ लो बेटी पुष्पा, यहीं कहीं पड़ी होगी बत्ती।

[इतने में ही शान्ति और सुशीला आँगन में प्रवेश करते है।]

सुशीला : (आवेश और खुशी से) पिताजी!

[कृष्णदेव एकदम हुक्का छोड़ कर आवाज

की तरफ देखते हैं।]

कृष्णदेव : अरे कौन ? सुशीला बेटी ?

सुशीला : हां, पिताजी, मैं।

[लपक कर बाप से लिपट जाती है। दोनों बड़ी देर गले मिलते हैं और दोनों की आंखों से आंसू निकल पड़ते हैं। मगर शान्ति पर नज़र पड़ते ही कृष्णदेव सँभल जाता है और बेटी को छोड़कर उसकी तरफ बढ़ता है। इतने में ही पुष्पा हाथ में लालटेन लेकर बाहर आती है और आँगन में अचानक सुशीला को आया देखकर खुश हो जाती है।]

पुष्पा : कौन ? अरे सुशीला, तुम ?

पुष्पा : अरे बच्चो, देखो तो बाहर कौन आया है !

[पाँच-छः बच्चे दौड़े-दौड़े आते हैं और सुशीला को देखकर मौसी-मौसी कह कर लिपट जाते हैं। सुशीला सबको प्यार करती है। बाहर खुशी वाला शोर-सा सुन कर सुशीला की तीनों दूसरी बड़ी बहनें मीरा, राधा और लीला भी बाहर आ जाती हैं। उनके पीछे-पीछे सुशीला की विधवा बुआ सावित्री भी आती है। सुशीला इन सब के गले मिलती है। सब बहुत खुश होते हैं। शान्ति इन सब औरतों को हाथ जोड़ कर नमस्ते करता है। इतने मे ही पुष्पा के पति के सिवाय तीनो बड़े जँवाई भी खेतों की ओर से घूम-घाम कर घर वापिस पहुँचते हैं। शान्ति तीनो के साथ आदर से हाथ मिलाता है। सुशीला अपनी बहनों, उनके बच्चो, बुआ के साथ अन्दर

जाती है। बहनें, बुआ ससुराल वालों के बारे में उससे तरह-तरह के प्रश्न पूछ रही हैं और बच्चे बड़े शौक से दुल्हन मौसी को देख रहे हैं। दूसरी तरफ आदमी लोग भी सभी इकट्ठे बातें कर रहे हैं। फसल, खेती-बाड़ी, राजनीति वगैरा की।]

[अगली सुबह जब सभी इकट्ठे बैठ कर चाय, नाश्ता कर रहे हैं तो माहौल को थोड़ा स्वाभाविक बनाने के लिए एक बच्चा दूसरे को हिलाकर चाय गिरा देता है। वह रोने लगता है। औरतें बच्चों को चुप कराती हैं। फिर थोड़ी देर में जब माहौल खामोश-सा होता है तो कृष्णदेव कुछ बोलते हैं।]

कृष्णदेव : तो तुम चारों बेटियों ने फैसला कर लिया है कि आज शाम वापिस चली जाओगी ?

राधा : नहीं, मीरा शायद कल जाएगी। (मीरा के पति की ओर इशारा करके) क्यों जीजा जी आपके पास तो अभी छुट्टी है, और फिर आप लोग हैं भी इतनी दूर। कौन-सा रोज-रोज आया जाता है।

कृष्णदेव : ठीक कहती है राधा। मैं तो कहता हूं तुम सभी दो-चार दिन और रुक जाती तो अच्छा था। देखो बच्चों के साथ कैसी रौनक लगी है। मन लगा हुआ है। (ठंडी सांस भर कर) तुम सब चली जाओगी तो मैं एकदम अकेला पड़ जाऊंगा।

मीरा : नहीं पिताजी, हम आपको अकेला नहीं रखेंगे। हम सब बहनों ने इस बात पर सोच लिया है और फैसला किया है कि बड़ी दीदी का बेटा नरेश आपके पास रहेगा।

कृष्णदेव : मगर उसकी पढ़ाई ?

लीला : अभी तो वह इस साल नवीं क्लास में ही गया है। हमारा यह ओहर वाला स्कूल दसवी तक है। सो दो साल यहाँ रह कर भी पढाई हो जाएगी।

कृष्णदेव : मगर वह तुम्हारे बगैर, अपने छोटे बहन-भाइयों के बगैर रह जाएगा इस बूढे के साथ ?

लीला . कैसी बातें करते है पिताजी आप। आपको तो पता ही है, आपके साथ उसका कितना लगाव है। जब उसको यह बात पता चलेगी, कैम्प से वापिस आकर उछल पडेगा खुशी के मारे।

कृष्णदेव मगर बेटी, खाना कौन बनाएगा ? मैं तो अपने लिए जैसे-तैसे कुछ कर सकता हूँ, पर···

राधा : (बीच में ही रोककर) वह भी आपको चिन्ता करने की जरूरत नही पिताजी ! सब इन्तजाम हो गया है।

[सभी बहनें मुस्कराकर बुआ की तरफ देखती हैं।]

कृष्णदेव : (कुछ समझ नहीं पाता) क्या इन्तजाम हो गया है ? मुझे तो कुछ समझ में नही आ रहा है।

एक जँवाई : इन सबका इशारा, पिताजी, बुआ जी की तरफ है।

[सभी बहनें और उनके पति बुआ की तरफ मुस्कराकर देखते हैं। केवल सुशीला, शान्ति और कृष्णदेव हैरान होकर बुआ की तरफ देखते हैं, मानो उन्हे कुछ भी समझ मे नहीं आ रहा हो।]

बुआ : हाँ, भैया, इनका इशारा मेरी तरफ ठीक है।

कृष्णदेव : क्या मतलब, सावित्री, तुम यहाँ मेरे पास रहोगी ? सच ? मुझे तो यकीन नहीं आता।

बुआ : इसलिए यकीन नही आता न कि जब तो तुमने जिद की थी, बहुत जोर लगाया था उनकी मौत के बाद

कि यही आकर रह, तब तो मैंने तुम्हारी बात नहीं मानी, और अब···

कृष्णदेव - (बीच में ही रोकते हुए) हाँ, हाँ, तब तो तूने यही कह कर जिद पूरी कर ली थी कि पति न रहे तो भी क्या हुआ, बाल-बच्चे नहीं हैं तो भी क्या पति की सम्पत्ति, उनके हिस्से की तो पूरी हकदार हूँ। इसलिए मैं अपना हिस्सा छोड़कर नहीं आ सकती···

बुआ : (बीच में ही) हाँ, ठीक कहते हो भैया। यही कह कर मैंने तुम्हारी सलाह ठुकरा दी थी। मगर अब बहुत सोच-समझकर मैंने यह फैसला किया है कि मैं हिस्सा लेकर भी क्या करूँगी! अकेली जान तो हूँ। मेरी जरूरतें ही क्या है! बस दो जून की रोटी और तन ढाँपने के लिए कपड़े। परलोक भी कौन-सा हिस्से को सिर पर उठा कर ले जाऊँगी! खाली हाथ ही जब जाना है तो क्यों माया से इतना मोह रखूँ! यहाँ दोनों वक्त तुम्हें अपने हाथ से पका कर खिला सकूँगी तो मन को चैन मिलेगा, सुख मिलेगा, सन्तोष होगा।

कृष्णदेव : बहन, तुमने यह फैसला करके मुझ पर बड़ी मेहरबानी की है। इस घर पर तेरा भी उतना ही हक है जितना मेरा है। मैं उस दिन भी यही कहता था, आज भी यही कहता हूँ। यहाँ अपनी मर्जी से रह, जैसे मर्जी से रह। बस सुखपूर्वक रह। मैं तो सदा तेरे सुख की कामना करता हूँ।

सुशीला : (बुआ के गले में लिपट कर रो पड़ती है) मेरी प्यारी बुआ, तुमने यह बहुत अच्छा फैसला किया। अब मुझे पिताजी की कोई फिकर न रहेगी!

लीला, राधा : (मुस्करा कर) इन्तजाम पसन्द आया पिताजी?

कृष्णदेव : (नम आँखों से मुस्करा कर) यह कब करती रही

तुम सब मिलकर अपने पिता के अकेलेपन के लिए इन्तजाम ? इतनी फिक्र तो शायद बेटा होता, वह भी न करता। वह भी पत्नी का हाथ पकड़ कर चलते-चलते कहता, अच्छा पिताजी अब चलते हैं, और छुट्टी नही अब अपने पास ! *(सभी हँस पड़ते हैं)* तुम इतनी समझदार कैसे हो गई सब ?

सब : समझदार पिता की बेटियाँ है न इसलिए।

कृष्णदेव : *अच्छा-अच्छा रहने दो, अब बातें ही बनाओगी या* कुछ खिलायोगी-पिलाओगी भी।

मीरा : (हलुए की प्लेट में से उठाकर कुछ हलुआ शान्ति की प्लेट में डालती है, शान्ति और लेने से मना करता है।) अरे ले लो जीजा जी, शर्माते क्यों हो, केवल दूल्हा हो नये नवेले, घर तो पुराना ही है। है न ?

[शरारत से उसकी तरफ देखती है, सुशीला हँसती है।]

राधा : अरे,हाँ, नये जीजा जी, अब और किसी को न अंग्रेजी पढाना नहीं तो···

[बीच में सब जोर से ठहाका मारते हैं। सुशीला शरमा कर शान्ति की ओर नजर उठाकर देखती है। शान्ति इस शरारत से शरमा कर नजरें नीची कर लेता है।]

[अगले दृश्य मे एक बहन को छोड़ कर बाकी सब वापिस अपने-अपने बच्चों व पतियो के साथ जा रही है। सब गले मिलकर उदास होकर बिछुड़ जाती है। शान्ति सबको हाथ जोड़कर नमस्ते करता है, कृष्णदेव आशीर्वाद देता है।]

[अगले दिन मीरा भी चली जाती है।

कृष्णदेव आँगन मे बैठा हुक्का पी रहा है। शान्ति उसके पास ही कुर्सी पर बैठा है। दोनों अस्पष्ट बातें कर रहे है, फिर शान्ति बात शुरू करता है।]

शान्ति : पिताजी, मैं भी सोच रहा हूँ, कल शाम तक हम भी चाँदपुर लौट जाएँ।

कृष्णदेव : क्यो, बेटा, क्या माता-पिता जी ने कहा है जल्दी आने के लिए ?

शान्ति : नही, उन्होने तो कहा था, आप जितने दिन ठहराना चाहे, ठहरा ले।

कृष्णदेव : तो फिर जल्दी क्या है ! कुछ दिन और ठहर जाओ।

शान्ति : जी, मै सोच रहा हूँ कि मेरी छुट्टी अब तीन दिन और रह गई है। इसलिए कल तक, अगर आप इजाजत दें तो सुशीला को घर छोड आऊँ। फिर दो दिन बाद यहाँ आकर मुझे ड्यूटी पर हाजिर होना पड़ेगा। आप जब भी कहेंगे, मैं सुशीला को आपसे मिलने ले आया करूँगा।

कृष्णदेव : (बात को समझते हुए) नही-नही बेटा, तुम मेरे बारे में इतनी चिन्ता क्यों करते हो ! चार बेटियाँ पहले भी ससुराल भेजी हैं। बेटी के बाप को पता होता है कि एक दिन तो इस अमानत को दूसरों को सौंपना ही है, सो उसे दिल पक्का करना पड़ता है, भावनाओं पर काबू रखना पडता है। तुम मेरी फिक्र बिल्कुल न करो। मैं तो यूँ ही कह रहा था। तुम्हारी बात ठीक है, छुट्टी जब दो-तीन दिन बाकी रह गई हैं तो तुम सुशीला को अपने घर माता-पिता के पास स्वयं छोड़ आओ। तुम्हारे वहाँ होते ही सबके साथ अच्छी तरह जान-पहचान हो जाएगी, घर माहौल सब समझ सकने मे उसे मदद मिलेगी।

शान्ति : जी ठीक है।

[शाम के समय शान्ति और सुशीला दोनों जा रहे हैं। कृष्णदेव उनको विदा करने दरिया के घाट तक आता है। रास्ते में वे बातें कर रहे हैं। घाट पर पहुंच कर बेटी को गले लगा कर कहते हैं।]

कृष्णदेव : देख बेटी, जब मैंने शान्ति से तेरे बारे में रिश्ते की बात की थी, तो इसने हिचकिचाते हुए कहा था कि सुशीला बड़े घर की बेटी है, और अब मैं कहता हूँ, तू उस अपने घर की बड़ी बहू है। इस बड़े शब्द का बड़प्पन सदा बनाए रखने की कोशिश करना, अपने व्यवहार में भी, अपने आचरण में भी।

[सुशीला बाप के गले से लिपट कर रोती है।]

[कृष्णदेव सुशीला को प्यार से हटा कर, शान्ति की ओर देखता है, शान्ति पांव छूता है।]

कृष्णदेव : (रुंधे गले से) शान्तिस्वरूप बेटा, ड्यूटी पर जब आ जाओगे, तो मिलते रहना। रोज न सही तीसरे-चौथे दिन ही सही। अपने यहाँ रहने को मैं तुम्हें मजबूर नहीं करना चाहता। मैं जानता हूँ, तुम्हारे स्वाभिमान के खिलाफ है ऐसा आग्रह करना। और मैं कभी कोई ऐसी बात नहीं करना चाहूँगा जो तुम्हें सुख के बदले दुःख दे। सुशीला बेटी को तुम तो अच्छी तरह जानते हो। अभी बच्ची ही है, नादान है। बस प्यार से समझा दिया करना···(गला रुंध जाता है।)

शान्ति : आप अपनी बेटी की तरफ से बिल्कुल निश्चिन्त रहें। बस अपना ख्याल रखें।

कृष्णदेव : (दिल पर काबू करते हुए) ठीक है बेटा, अब तुम लोग जाओ। किश्ती आ गई है। अपने माता-पिता जी को मेरा हाथ जोड़कर प्रणाम कहना।

शान्ति : जी, बहुत अच्छा।

[सुशीला आगे की ओर बढ़ती हुई भी पीछे खड़े अपने पिताजी को देखती जा रही है। थोड़ी देर में कृष्णदेव भी आंखों से ओझल हो जाते हैं और फिर किश्ती में जाते हुए शान्ति और सुशीला दिखाई देते हैं। कृष्णदेव उदास मन से वापिस अपने घर को आते हैं।]

दृश्य ग्यारह

[शान्ति और सुशीला घर पहुँचते हैं। सुशीला से मिलकर सास और देवरानी बहुत खुश होती है। शान्ति, सुशीला, मां, बाबूजी और मणि सभी बैठे हैं और सुशीला के मायके वालों का हाल-चाल वगैरा पूछ रहे हैं। इतने में श्यामसुन्दर बाहर से आकर उनके कमरे में (जहां वे सब बैठे हैं) दाखिल होता है। शान्तिस्वरूप और सुशीला को आया हुआ देखकर एक क्षण के लिए रुकता है, मगर दूसरे ही क्षण गुस्से वाला मुंह बनाकर दूसरे कमरे में चला जाता है। शान्तिस्वरूप पुकारता भी है उसे, मगर वह न जवाब देता है, न रुकता है। सभी के चेहरों का रंग बदल जाता है।]

शान्ति : मां, यह श्याम का बच्चा अभी तक नाराज हुआ बैठा है? उस दिन से इसका मूड अभी तक ठीक नहीं हुआ क्या?

मां : नहीं, वह तो दूसरे दिन तक ठीक हो गया था। तू तो जानता है इसका गुस्सा पानी का बुलबुला है। ज्यादा देर तक नहीं टिकता।

शान्ति : पर अब दोबारा यह बुलबुला क्यों बन गया फिर ?

माँ : लो, इसके लिए क्या कोई बड़ी बात की जरूरत होती है। जो बात इसको काट दी जाए या इसको अच्छी न लगे, बस उसी पर इसका मूड बिगड़ जाता है। दूसरों का भी जी खराब करता है। पर तू भी पगला है, आते ही यह सब ले बैठा। बहू भी क्या सोचती होगी, गई थी तब भी यही झमेला था अब आकर पहुँची ही है तो फिर वही विषय, जैसे इस घर में श्याम और श्याम के मूड के अलावा और कोई बात है ही नहीं। चलो, उठो, दोनों थोड़ी देर आराम करो, इतनी दूर से चल कर आए हो। बहू थक गई होगी। मैं अभी तुम्हारे खाने-पीने के लिए कुछ इन्तजाम करती हूँ। (माँ यह कहकर उठने लगती है।)

मणि : (उसको बिठाकर स्वयं उठते हुए) आप बैठिए यहाँ, माँ जी, बातें कीजिए। रसोई में मैं जाती हूँ। (वह चली जाती है।)

बाबूजी : (सुशीला की ओर देखते हुए) बेटी, तुम्हारे पिताजी कैसे हैं ? हमारा प्रणाम कहा न उनको ?

सुशीला : (शरमाकर धीमे से बात करते हुए) जी, अच्छे हैं। उन्होंने आपको और माँजी को प्रणाम कहा है। (माँ की ओर देखते हुए) माँजी, लीजिए, यह पिताजी ने कुछ मिठाई भेजी है। (थैले में से निकाल कर लिफाफा पकड़ाती है।)

बाबूजी : (उठते हुए कुछ याद-सा करके) अच्छा, तुम लोग बैठो, बातें करो, मैं थोड़ी देर तक आता हूँ।

शान्ति : मगर आप जा कहाँ रहे हैं बाबूजी ?

ठाकुरदास : कहीं दूर नहीं बेटा ! तुम्हारे मनसाराम चाचा के यहाँ जा रहा हूँ। उसका बैल कल अचानक बहुत

बीमार हो गया था, जरा हाल-चाल पूछकर आता हूँ। फिर ज्यादा अँधेरा हो जाएगा। (चला जाता है)

[एक मिनट के बाद सुशीला भी उठ पड़ती है।]

मां : तुम कहाँ जा रही हो बहू ?

सुशीला : कहीं नहीं माँजी, मणि के पास रसोई में जाती हूँ।

मां : अरे नहीं बहूरानी ! नई नेवली बहू का रसोई में भला क्या काम ! कुछ दिन आराम कर। अभी तू नई-नई है न, मेहमान जैसी। मेहमान की तो खातिर की जानी चाहिए न, न कि आते ही उसको काम मे लगा दो।

शान्ति : (मुस्करा कर) पर मां, यह मेहमान वापिस नहीं जाने वाला। यहीं डेरा जमा लेगा तुम्हारे पास।

[सुशीला शरमा कर मुस्कराती है।]

मां : (खुश होते हुए) बहुत अच्छी बात है। यही घर बसा ले अपना। हमें कोई ऐतराज नहीं। (फिर जैसे उसके मन की बात को समझते हुए) अच्छा जा। मणि से बात करने को जी चाह रहा होगा न।

[सुशीला खुश होकर चली जाती है। अब कमरे में केवल शान्ति और मां हैं। सुशीला के वहाँ से जाते ही शान्ति गम्भीर होकर फिर पूछता है, जैसे ही श्याम उस कमरे से बिना किसी से बात किए बाहर निकलता है।]

शान्ति : मां, बताओ क्या बात हुई है ? क्यों श्याम को यह गुस्से का दौरा पड़ा हुआ है ? तुमने पूछा, मनाया नहीं ?

मां : (गम्भीर होकर) क्या बताऊँ ? अगर दूसरों के कसूर

पर इसको गुस्सा आए, तब तो बात समझ में आती है कि चलो हमारी ही गलती है, और तब मनाया भी जाना चाहिए। मगर जब गलती भी यह खुद करे, कसूर भी इसी का हो, और रूठकर भी यह खुद ही बैठ जाए, तो मनाने की बात मुझे तो समझ नहीं आती। सच बताऊँ, मैं तो कभी-कभी निराश हो जाती हूँ इसके ऐसे व्यवहार से।

शान्ति : (कुछ न समझते हुए) पर हुआ क्या? साफ-साफ बताओ न।

माँ : हुआ यह कि (कुछ सोचते हुए) हाँ, मंगलवार की बात है, छोटी बहू एक-दो दिन से कह रही थी कि उसकी पीठ में हल्का-हल्का दर्द रहता है, कभी-कभी पेट में भी दर्द उठता है। पहले तो मैंने सोचा, शादी में काम-काज करती रही सो थकावट वगैरा से दर्द हो गया है, अपने आप ठीक हो जाएगा। मगर जब यह ठीक होने की बजाय बढ़ने लगा तो मुझे चिन्ता हो गई। सो मैंने इसको कहा, "बहू की तबियत ठीक नहीं है, जा इसके लिए दवा ले आ" तो उलट कर जवाब दिया, "नहीं, मैं नहीं लाता" मैंने कहा, "तो और कौन लाएगा?" "कोई लाए, मुझे क्या! जो बीमार है, वह खुद नहीं ला सकती?" "अगर खुद ला सकती होती तो ले न आती, जरूर तुझे कहना पड़ता?" "वह नहीं ला सकती तो मैं भी क्यों लाऊँ? बीमार वह है कि मैं? क्या मैंने बीमार किया है उसको, जो मैं उसके लिए दवा लेने जाऊँ?" अब मुझे भी गुस्सा आ गया, और सच-सच निकल गया मुँह से, "हाँ। तूने ही बीमार किया है उसे। मूर्ख! तू बाप बनने वाला है उसके बच्चे का।"

शान्ति : (एकदम खुश होकर पूछता है) क्या ? सच माँ ? वह पागल बाप बनने वाला है ?

माँ : अरे, तू इतना खुश हो रहा है यह खबर सुनकर ! एक वह है जिस पर इस खुशी की खबर का भी कोई असर नहीं हुआ, उल्टा कहने लगा, "मैं कोई बाप-बाप नहीं बनूँगा किसी का।"

[यह सुनकर शान्ति के चेहरे से खुशी की वह लहर गायब हो जाती है और चेहरा गुस्से से भर जाता है।]

शान्ति : यह तो मूर्खता की हद है। (उठने की कोशिश करता है) मैं ठीक करता हूँ उसको। सारे होश अभी ठिकाने लगाता हूँ। आखिर वह समझता क्या है कि उसे कोई···

[माँ बीच में ही रोककर उसे शान्त करने की कोशिश करती है।]

माँ : शान्त हो जा बेटा ! तू क्यों इतना दुःखी-क्रोधित होता है, हमारे लिए कोई नई बात है क्या यह ?

शान्ति : पर माँ, बात की गम्भीरता को समझना चाहिए। मणि को दवाई देना बहुत जरूरी है।

माँ : तू फिकर न कर। मैंने तेरे बाबूजी को भेज कर दवा मँगवा कर दे दी थी। अब वह बिल्कुल ठीक है।

[इतने में ही मणि हाथ में खाने-पीने का सामान ट्रे में उठाए कमरे में दाखिल होती है। साथ ही सुशीला भी आ जाती है। शान्ति मणि को गौर से देखता है और उसका बिगड़ा हुआ मूड थोड़ा बदल जाता है। उधर से बाबूजी कमरे में दाखिल होते हैं, पीछे-पीछे श्याम भी आता है। बाबूजी वहीं सबके

साथ कमरे में बैठ जाते हैं। श्याम अन्दर जाने लगता है, मगर माँ उसको प्यार से कह कर बिठा लेती है।]

माँ : यहाँ आ बेटा श्याम ! हम सब यहाँ बैठे है, तू वहाँ कहाँ जा रहा है, अकेला कमरे मे !

[आकर बैठ जाता है।]

माँ : बड़े भैया और भाभी के पाँव नहीं छुएगा क्या ?

[श्याम जैसे जबरदस्ती उठ कर दोनों के पाँव छूता है। सुशीला उसको अपने पाँव छूने से रोकने की कोशिश करती है। शान्तिस्वरूप का श्याम के इस तरह कहने के अनुसार पाँव छूने पर उसके प्रति गुस्से वाला मन बदल जाता है और वह उसको प्यार से अपने पास बिठा लेता है। एक क्षण के लिए अपने ख्यालों मे शान्ति को अपना यह भोला बेवकूफ भाई बाप बना हुआ, छोटे से बच्चे को गोद मे लिये हुए प्यार करता हुआ नजर आता है।]

शान्ति : (*श्याम का मूड ठीक करने के लिए उसकी तरफ* देखकर) तेरे दोस्त बिरजू, मोहन और भोला मिले थे आज मुझे रास्ते में। मैंने पूछा, कहाँ से आ रहे हो, कहने लगे, दंगल देखने गए हुए थे विजयपुर। तू नही गया था क्या ?

श्याम : (गुस्से में) वो मेरे दोस्त नही है अब। मैं क्यों जाता उनके साथ।

शान्ति : (मुस्कराते हुए) क्यों, झगड़ा हो गया है क्या उनसे ?

श्याम : झगड़ा तो होता ही रहता है। (सारे हँस पड़ते हैं। मगर वह गम्भीर ही रहता है।) मैं तो रूपलाल

और केशव के साथ गया था।

शान्ति : ये नये दोस्त हैं क्या ?

श्याम : (भोलेपन से) और क्या ! दोस्तों की कमी है क्या ?

शान्ति : (मिठाई उसकी ओर बढ़ाते हुए) ले यह बर्फी खा। मेरे ससुर जी ने तेरे लिए खास भेजी हैं।

[श्याम मुस्करा कर उसकी ओर देखता है और बर्फी उठाकर खा लेता है। सभी मुस्कराते हैं।]

दृश्य बारह

[शान्ति वापिस ड्यूटी पर हाजिर होने जा रहा है। अपने कमरे से बाहर निकलने से पहले सुशीला से विदा लेता है।]

शान्ति : अच्छा, अब मैं चलूं ?

सुशीला : कब आएँगे लौटकर ?

शान्ति : (शरारत से) जब तुम कहो। आज शाम को आ जाऊँ ? (सुशीला शरमा जाती है) शनिवार को आ जाऊँगा। ठीक है ?

सुशीला : आने से पहले पिताजी से मिलते आना।

शान्ति : ठीक है। जरूर मिलकर आऊँगा।

शान्ति : (एक क्षण उसे देखते रहने के बाद) तुम उदास तो नहीं हो न ?

[सुशीला मन की भावनाओं को छुपाते हुए, गर्दन हिला कर 'ना' कहती है।]

शान्ति : यहाँ मणि और माँ के साथ तुम्हारा मन लगा रहेगा। वैसे एक नटखट बिगड़ा हुआ देवर भी है मन लगाने के लिए।

[दोनों मुस्कराते हैं और फिर शान्ति कमरे

से बाहर निकल जाता है। बाहर आकर माँ-बाबूजी के चरण छूकर आज्ञा लेता है और चला जाता है।]

[अगले दृश्य में शान्ति अपने स्कूल में है। स्कूल में आधी छुट्टी के समय सारा स्टाफ़ स्टाफ़ रूम में जमा होता है। अध्यापक एक-दूसरे से बातें कर रहे हैं।]

एक : तो आज अपने यार शान्तिस्वरूप की पार्टी है ?

दूसरा : *यह शान्तिस्वरूप क्या हुआ यार !*

पहला : (हँसता हुआ) शान्तिस्वरूप Short poem in *English वह English teacher है न ? (बाकी भी हँसते हैं।)*

एक अन्य : अरे यार सुशीला (क्यों ठीक है) शादी पर तो बुलाया नहीं, हम तो तैयार होकर बैठे थे कि बारात *में जाएँगे। नम्बरदार जी से अपनी खातिर करवाने* का एक मौका मिलेगा। (बाकी हँसते हैं)

एक अन्य : (पहले की बात का जवाब देते हुए) अरे चन्देल, *शान्तिस्वरूप साहब ने शादी इतने सीधे-सादे ढँग* से करवाई कि मुझे तो लगता है दूल्हा मियां खुद भी बारात में नहीं गए होंगे।

[सभी जोर का ठहाका मारते हैं। शान्ति-स्वरूप मुस्करा देता है। इतने में हैडमास्टर कमरे में प्रवेश करते हैं। माहौल थोड़ा अनुशासित हो जाता है। पार्टी खत्म होने पर धन्यवाद देते हैं अपनी ओर स्टाफ़ की ओर से।]

हैडमास्टर : धन्यवाद के शब्दों के साथ ही मैं नवविवाहित जोड़े (दम्पति) के सफल वैवाहिक जीवन की हार्दिक कामना करता हूँ। मुझे विशेष खुशी इस बात की

है कि दर्प के ढोंग, फिजूलखर्चों की परम्परा से हटकर शान्तिस्वरूप ने जिस तरह सादेपन से शादी करने का साहस दिखाया, उससे हमारे समाज के गलत रूढ़िवादी रिवाजों और विचारधाराओं को बदलने में एक नई दिशा मिलेगी। अपने इस अनुकरणीय उदाहरण में शान्तिस्वरूप ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह न केवल एक आदर्श अध्यापक ही हैं बल्कि आदर्श और पूर्ण जिम्मेदार एक सामाजिक कार्यकर्ता भी है।

[सभी तालियाँ बजाते हैं। पार्टी खत्म हो जाती है।]

दृश्य तेरह

[शान्ति अपने घर पहुँचता है। घर में सुशीला उसको मिलती है। अपने कमरे में दोनों बात करते हैं।]

शान्ति : कैसी हो शीलू ?

सुशीला : (पति को पाकर खुश होती है) ठीक हूँ। आप कैसे हैं ?

शान्ति : वैसे तो ठीक हूँ, पर तुम्हारी याद बहुत आती है अकेले में। क्या तुम नहीं याद करती मुझे ?

[शरमा कर मुस्कराते हुए गर्दन हिला कर ना करती है। शान्ति करीब जाकर उसको प्यार करता है।]

सुशीला : पिताजी से मिलकर आए हो ?

शान्ति : जी हाँ, मेम साहब ! आपके पिताजी बिल्कुल ठीक-ठाक हैं।

सुशीला : उदास तो नहीं रहते ?

शान्ति : अरे नहीं ! क्या बात करती हो पिताजी की लाड़ली बेटी ! वह तुम्हारा भाजा नरेश है न, बडा दिल लगा कर रखता है अपने नाना जी का। और बुआ जी ने तो ऐसा स्वादिष्ट खाना खिलाया कि बस मजा आ गया।

[शान्ति की यह बात सुनकर बड़ा सन्तोष व सुख महसूस होता है।]

सुशीला : और मेरी प्यारी गौरी का क्या हाल है ?

शान्ति : अरे उसका हाल तो पूछना मैं भूल ही गया। तुमने कहा ही न था। अच्छा, अगली बार जरूर पूछ कर आऊँगा। उसी से पूछ लूँगा। (दोनों हँस पड़ते हैं)

शान्ति : यहाँ आओ, पास बैठो और सुनाओ अब तुम्हारा क्या हाल है ? माँ और मणि के साथ मन लगा तुम्हारा या नहीं।

सुशीला : (पास आकर बैठ जाती है और बताती है) माँजी तो बहुत अच्छी हैं। बहुत प्यार करती है मुझे। मुझे तो पता ही नहीं था माँ का प्यार कैसा होता है ! मेरा मन लगा रहे, इस बात का हमेशा पूरा ख्याल रखती हैं।

शान्ति : और मणि ?

सुशीला : मणि तो यहाँ है ही नहीं। वह तो चली गई है।

शान्ति : (घबराकर) चली गई ? मगर कहाँ ?

सुशीला : (शरारत से मुस्कराते हुए) अपने मायके।

शान्ति : (कुछ न समझते हुए) मगर क्यों ? क्या श्याम ने···

सुशीला : (बीच में ही) नहीं-नहीं, आप तो घबरा गए। ऐसी कोई बात नहीं है। उसके माता-पिताजी यह कह कर ले गए कि पहला-पहला बच्चा है, सो उनके यहाँ रिवाज है कि नाना-नानी के घर में ही पैदा होगा।

शान्ति : (निश्चिन्त होते हुए) अच्छा, तो यह बात है। (कुछ क्षणों के बाद) अरे घर मे और कोई नजर नही आ रहा, बाकी सब कहाँ हैं ?

सुशीला : माँजी तो पड़ोस मे नानकी चाची के यहाँ गई है। उनकी बेटी कान्ता, जिसकी अभी-अभी शादी हुई है, वह ससुराल मे आई है, तो उसको मिलने गई है, और बाबूजी और देवर जी अभी-अभी थोड़ी देर पहले खेतों की तरफ गए है।

शान्ति : (शरारत से) इसका मतलब घर में कोई नही है।

[*सुशीला शरमा जाती है।*]

शान्ति : (थोड़ी देर सोच कर) अच्छा ! क्या यह जरूरी होता है कि सबका पहला बच्चा नाना-नानी के घर में ही पैदा हो ? क्या हमारा भी···

सुशीला : (मुस्कराते-लजाते हुए) अगर रिवाज है तो जरूरी ही होता होगा।

[शान्ति कुछ सोचता है।]

सुशीला : (उसे खामोश देखकर) खामोश क्यों हो गए ? क्या सोच रहे हो ?

शान्ति : सोच रहा हूँ, अगर हमारा बच्चा भी तुम्हारे पिता जी के घर में पैदा हुआ तो मैं कैसे जाऊँगा उसे देखने ! मुझे तो बहुत शर्म आएगी।

सुशीला : (उसके भोलेपन पर हँस पड़ती है) तो ऐसा मौका ही नही आने देंगे।

शान्ति : नही-नही, मौका तो आएगा ही। देखी जाएगी तब। अच्छा हाँ, सुनो, कल मैं शाम को नही, बल्कि सुबह-सुबह निकल जाऊँगा।

सुशीला : क्यों, सुबह क्यो ?

शान्ति : परसो हमारे स्कूल का वार्षिक समारोह है। सो कुछ तैयारी का काम रहता है। याद है तुम्हें पिछले

साल वाला समारोह जब तुमसे पहली बार मुलाकात हुई थी ?

[अगली सुबह शान्ति वापिस जा रहा है। माँ खाना बन्द करके उसे ले जाने को पकड़ाती है। बाबूजी उसके साथ-साथ खेतों तक जाते हैं। शान्ति चरणधूल ले विदा लेता है।]

दृश्य चौदह

[मणि के मायके का घर। घर में कुछ चहल-पहल। एक कमरे में मणि की बहनें, माँ, चाची और अड़ोस-पड़ोस की दो-चार औरतें बैठी लड़के के पैदा होने पर गाए जाने वाले बधाई-गाने गा रही हैं। बहनें बहुत खुश हैं। आपस में खुसर-फुसर करके फिर हँसती दिखाई देती हैं। एक औरत अन्दर के कमरे से बाहर जहाँ गाना-बजाना चल रहा है वहाँ आकर रुकती है। गाना उसी समय खत्म होता है।]

वही औरत : मणि की माँ ! बहुत बधाई हो। नानी बन गईं। बड़ा सुन्दर नाती है तुम्हारा।

एक छोटी बहन : हाँ, हाँ, सबसे छोटी मौसी पर गया है शक्ल-सूरत में।

[सभी औरतें हँस पड़ती हैं।]

वही औरत : शक्ल-सूरत में तो अपने पिता पर ही गया लगता है मुझे, क्यों मणि की अम्मा ?

मणि की माँ : (हँसते हुए) अरी निक्कू की दादी, तू भी इस भोली जैसी लड़कियों वाली बात कर रही है। बच्चा अभी दो दिन का हुआ और तुम लोग शक्लें भी मिलाने लगी हो। हाँ, शक्ल-सूरत तो अपने माता-पिता जैसी ही होगी इसकी, पर जरा बड़ा तो हो लेने दो।

[इतने में अन्दर से बच्चे के रोने की आवाज आती है।]

मां : ये लो, नाराज हो गया मुन्ना। सोच रहा है मेरे बारे में ये नानियां, मौसियां न जाने क्या बातें कर रही हैं।

[वह छोटी मौसी बच्चे के रोने पर भाग कर अन्दर उसके पास जाती है। सभी हँसती हैं।]

वही औरत : अरे, हम तो कह रही है कि हमारा यह राजा बेटा हजार वर्ष जिए, बहुत बड़ा बने। अपने दादा-नाना, माता-पिता सबका नाम ऊँचा करे। हम उसकी बुराई थोड़े ही कर रही है जो वह नाराज हो जाएगा। अरे हां, मणि की अम्मां, मणि के ससुराल यह खुशी की खबर भेज दी न !

मां : कैसे भेजते बहन। पिछले पांच-छः दिनों से कितनी बारिश हो रही है। अब शिवराम को बुलवाया है। कल सुबह भेजेंगे मणि की ससुराल उसे।

वही औरत : ठीक है। हवन वाले दिन जँवाई बाबू आएँगे न अपने बेटे का मुँह देखने और पूजा करवाने ?

मां : (खुश होकर) हां, हां, क्यों नहीं ! शायद सुनते ही आ जाएँ। ऐसी खुशी की खबर सुनकर रुक पाना मुश्किल होता है न। और फिर पहला-पहला बच्चा है। मणि बड़ी कमजोर हो गई थी। मैं तो घबराई हुई थी। पर भगवान का लाख-लाख शुक्र है, सब ठीक-ठाक हो गया। मां और बच्चा दोनों ठीक हैं।

वही औरत : अच्छा बहन (उठते हुए) अब चलती हूँ। जाकर घर का कुछ काम-काज देखूं।

[दूसरी औरतें भी उठ कर चलती हैं। मणि की मां उन सबको दोने में शक्कर देती है।]

दृश्य पन्द्रह

[ठाकुरदास खेतों की ओर से आते हुए घर में प्रवेश करते हैं। उनकी पत्नी खुशी से उतावली हुई उनके आँगन मे पहुँचते ही यह खुशी की खबर सुनाती है।]

शकुन्तला : अजी सुनते हो, शान्ति के बाबूजी, आप दादा बन गए।

ठाकुरदास : (खुशी की लहर चेहरे पर दौड़ जाती है) हैं, क्या कहा, मैं दादा बन गया? क्या बहू के यहाँ बेटा पैदा हुआ है?

शकुन्तला : हाँ, आज पूरे नौ दिन का भी हो गया आपका पोता।

ठाकुरदास : मगर यह खबर कौन लाया?

शकुन्तला : मणि के मायके से उसका भाई आया था। बड़ी देर आपका इन्तजार किया। आप न जाने कहाँ निकल गए थे! जब साँझ पड़ने लगी तो उन्होंने जिद की कि वापिस जरूर जाना है, इसलिए आपको मिल न पाया। ये देखो, शक्कर-छोले आए है उसके मायके से बेटे के पैदा होने की बधाई के लिए। (आदर से लाकर बड़े-बड़े लिफाफे उसके सामने रखती है।) कह रहा था कि बारिश की वजह से आपको जल्दी खबर न कर सके।

ठाकुरदास : बहू और बेटा दोनों ठीक है न? पूछा था तुमने?

शकुन्तला : हाँ-हाँ, बिल्कुल ठीक हैं। हाँ, याद आया, वह मणि का भाई कह कर गया है कि बेटा इस बुधवार को ग्यारह दिन का हो जाएगा तो उसी दिन का मुहूर्त निकलवाया है मणि के माता-पिता ने पूजा-हवन के लिए। उस दिन श्याम को वहाँ जाना है।

ठाकुरदास : मगर अभी वह कहाँ है?

शकुन्तला : आप तो ऐसे पूछ रहे है जैसे वह रोज तो इस समय घर मे होता है, पर आज कहाँ गया ! अरे श्याम के पिताजी, अभी थोड़ा और अँधेरा होने दो। आपका बेटा तब तक घर लौट आएगा।

ठाकुरदास . तुम तो ऐसे सुना रही हो जैसे मैंने उसे बिगाड़ा हो।

शकुन्तला : अरे मैंने तो यूँ ही कहा। आप नाराज़ क्यों हो! अभी आता ही होगा।

ठाकुरदास : ठीक है। अच्छा बड़ी बहू कहाँ है ?

शकुन्तला : वह तो यह खबर सुनते ही आस-पड़ोस में बताने चली गई। खुशी से फूली न समा रही थी वह।

[इतने में ही सुशीला वापिस लौट आती है। उसे देखकर सास-ससुर के चेहरो पर मुस्कान फैल जाती है।]

दोनों : कहाँ गई थी बहू ?

सुशीला · जी, अड़ोस-पड़ोस मे कहने गई थी कि आज रात हमारे घर कीर्तन के लिए आएँ।

[घर मे औरतो के गाने, ढोल बजाने और बीच-बीच मे हँसी-ठिठोली करने के स्वर।]

एक उभरता स्वर · अब तो ताई तुम्हारी बड़ी बहू का नम्बर भी आ जाना चाहिए।

दूसरा स्वर : हाँ-हाँ, दादी दो-दो पोतों को गोदी में खिलाती कितनी अच्छी लगेंगी।

[सभी ठहाका मारती है। सुशीला थोड़ा शरमा जाती है। इतने मे श्याम बाहर से आकर अन्दर दाखिल होता है और उसी कमरे में से होता हुआ दूसरे कमरे मे जाने लगता है। औरतें उस पर नज़र पड़ते ही कहने लगती हैं।]

एक अधेड़ औरत : अरे-अरे श्याम, कहाँ जा रहा है सीधा ? ज़रा बात

तो सुन ! (जबरदस्ती हाथ पकड़ कर बिठा लेती है)

दूसरी नौजवान : देवर जी, आज बचकर नहीं जा सकते। भाभियों का तो मीठा मुँह कराना ही पड़ेगा।

अन्य एक-दो : और हम जो तेरी बहनें बैठी हैं यहीं, तुझे यहं यूँ ही छोड़ देंगी !

दूसरी : तू बाप बना है मुन्ने का तो हम भी बुआएँ बनी है। क्यों चम्पा, गौरी, चमेली ?

तीनों : हां-हां, आज हम तो लड्डू खाकर ही जाएँगी।

[श्याम को कुछ समझ नहीं आता, और वह बिना कुछ बोले झटके से एकदम उठकर अन्दर चला जाता है। अन्दर उसके बाबूजी बैठे हुक्का पी रहे है। श्याम को देखते ही बाबू के चेहरे पर मुस्कान फैल जाती है।]

श्याम : यह क्या हो रहा है बाबूजी ! किस खुशी में यह गाना-बजाना हो रहा है ?

ठाकुरदास : (मुस्कराते हुए ही) तू घर में रहे तब तो पता भी चले तुझे। (उसके कन्धे पर प्यार से हाथ रख कर) देख बेटा, अब यह साँझ गए देर तक घर से बाहर रहना छोड दे। अब बचपना और अधिक नहीं चलेगा।

श्याम : (कुछ न समझते हुए, पुराने ढीठपने के साथ) क्यों, ऐसा क्या हो गया ?

ठाकुरदास : (मुस्काते हुए) तू बच्चे का बाप बन गया।

श्याम : (हैरानी और लापरवाही से मुँह बनाते हुए) क्या ? बच्चे का बाप ?

ठाकुरदास : (वैसे ही) हाँ बेटा, तू बड़ा भाग्यशाली है। इतनी अच्छी समझदार, सहनशील पत्नी मिली है तुझे और अब एक बेटा भी पैदा हो गया।

श्याम : (व्यंग्यात्मक लहजे से) अच्छा !

ठाकुरदास : क्यों, तुझे खुशी नही हुई क्या इतनी बड़ी खुशी की खबर सुनकर ?

श्याम : तो क्या नाचने लगूँ मैं ?

ठाकुरदास : (उसकी बात और व्यवहार से गुस्से में आकर) नहीं-नहीं, नाच-गाना तो केवल दोस्तों की शादियों की खुशियों में ही चाहिए। घर में खुशी की बात हो, तो क्या—होने दो—तुम्हारी बला से।···अरे, तेरे अन्दर दिल भी है जो कभी महसूस करता है ?

श्याम : (परवाह न करते हुए) मैं सोने जा रहा हूँ।

ठाकुरदास : (उसके आगे अपनी हार मानते हुए तथा प्यार से समझाने की कोशिश में) खाना खाए बिना ही सो जाएगा क्या ?

श्याम : मेरी फिक्र किसे है, सब अपनी-अपनी खुशी में मस्त है। कौन बैठा है रसोई में मुझे खाना खिलाने !

ठाकुरदास : (उसके बचपने पर मुस्कराते हैं तथा प्यार से कहते हैं) अच्छा सोने मत जा अभी, मैं कहता हूँ तेरी माँ या भाभी को तुझे खाना परोसें। पर सुन, पहले मेरी बात सुन। (उसके करीब आकर तथा प्यार से समझाते हुए) परसों मुन्ना ग्यारह दिन का हो जाएगा। मुन्ने के नाना-नानी ने सन्देश भिजवाया है कि बुधवार यानि परसों का मुहूर्त निकला है पूजा और हवन का। तुझे उस दिन मुन्ने का मुंह देखना है तथा पूजा में शामिल होना है।

श्याम : (एकदम पुराने जिद्दी स्वभाव से) नहीं, मैं नहीं जाऊँगा।

ठाकुरदास : (विवशता-भरे स्वर में) तुझे मुन्ने को देखने का भी मन में कोई भाव नहीं है ?

श्याम : जब यहाँ आएगा, तब देख लूँगा।

ठाकुरदास : मगर पूजा में तुम्हारा शामिल होना तो जरूरी है।

श्याम : क्यों, भगवान ने कहा है कि पूजा मेरे शामिल हुए बिना पूरी न होगी ?

ठाकुरदास : तू हर बात मे वहस न किया कर। कुछ रीति-रिवाज, धार्मिक संस्कार होते हैं, जिनको मानना पड़ता है।

श्याम : मुझे रीति-रिवाजों से कुछ नही लेना-देना।

ठाकुरदास : (आखिरी तर्क देते हुए) पर तू अपने आप सोच जरा ठण्डे दिमाग से, इस घर से इस खुशी के मौके पर वहाँ कोई न जाए तो क्या सोचेंगे वे लोग ? उनके मन में शंका न पैदा होगी कि यह कद्र है उनकी बेटी और उसकी खुशियों की कि कोई बधाई देने-लेने तक न आया।

श्याम : तो आप चले जाइए न !

ठाकुरदास : (खीजते हुए) अरे मूर्ख ! इस मौके पर मेरी नही तेरी जरूरत है। पूजा मे बच्चे का बाप बैठेगा न कि बच्चे के बाप का बाप। समझा ! (जरा कठोर होते हुए) अब आगे कुछ मत कहना। तू शुक्र मना कि इतनी सुशील पत्नी मिली है तुझे, जिसने आज तक तेरी करतूतों का जरा भी जिक्र अपने मायके जाकर न किया। पर कान खोल कर सुन ले, अब अगर तू फिर जिद पर अड़ गया तो उसके माता-पिता और सगे-सम्बन्धियों के प्रश्न उससे सारी बात उगलवा लेंगे। सहने की भी हद होती है। आखिर उस बेचारी ने तेरा बिगाड़ा क्या है, जो तू उसके साथ ऐसा कठोर व्यवहार करता है ! वह भी अपने माँ-बाप की बेटी है। तेरे इन गुणो का पता चल गया न उनको तो…

श्याम : (बीच में ही गुस्से से बात काटते हुए) तो क्या बिगाड़ लेंगे वह मेरा ?

ठाकुरदास : तेरा तो शायद कुछ न बिगाड़ें, क्योंकि वह ऐसे असभ्य नहीं हैं जो तू सोच रहा है, पर हाँ, अपनी बेटी को तो तेरे ऐसे कठोर व्यवहार को और सहने के लिए न भेजेंगे !

श्याम : तो न भेजें। मैं ही कौन-सा बुलाने जा रहा हूँ।

[ठाकुरदास सिर पकड़ कर रह जाता है।]

ठाकुरदास : अच्छा जा चला जा जिधर जा रहा था ! तेरे साथ बहस करने से बेकार अपना ही दिमाग खराब करना है।

[श्याम चुपचाप उठ कर दूसरे कमरे में सोने चला जाता है। ठाकुरदास सोच में डूबे दो-तीन मिनट कमरे में इधर से उधर बेचैनी में घूमते है।]

दृश्य सोलह

[शान्ति घर वापिस आ रहा है। खेतों के पास ही माँ उसे पास के घर से वापिस आती दिखाई देती है। उसके साथ एक औरत भी साथ-साथ चल रही है। दोनों कुछ अस्पष्ट बातें कर रही है।

शान्ति की माँ को छोड कर वह औरत सीता जैसे ही वापिस जाने को मुड़ती है, उसकी नजर उधर से आते हुए शान्ति पर पड़ती है। उसे देखकर वह शान्ति की माँ को कहती है।]

सीता : शान्ति की अम्माँ, देख तेरा बड़ा बेटा शान्ति आ रहा है। मुन्ने के पैदा होने की खुशखबरी मिल गई शायद तभी तो ताया दौड़ा चला आया। (सीता अपने रास्ते पर अपने घर की तरफ रवाना हो जाती है।)

[शकुन्तला दूर से आते शान्ति को देख कर

खुश हो जाती है और तेज-तेज कदमों से उसकी ओर बढ़ती है। जल्दी ही वह शान्ति के करीब पहुँच जाती है। शान्ति माँ को अचानक सामने पाकर खुश हो जाता है। पाँव छूता है। वह हैरान-सा होकर पूछता है।]

शान्ति : माँ, इस समय यहाँ कहाँ से आ रही हो? बहुत खुश नजर आती हो, क्या बात है?

माँ : बात है ही खुशी की, खुश क्यों न होऊँ। पता है बेटा, तू ताया बन गया है। अपने श्याम की बहू ने बेटे को जन्म दिया है।

शान्ति : (खुश होकर) माँ! बहुत बड़ी खुशी की बात है।

माँ : हाँ रे खुशी की ही तो बात है। तेरी ताई है न वह केशव की माँ, कल हमारे घर बधाई गाने न आई थी। उसकी बहू ने पूछने पर बताया कि वह थोड़ी बीमार है। सो मैंने सोचा, खुशी का मौका है, पोते की बधाई के शक्कर-छोले भी दे आऊँ उसे और हाल-चाल भी पूछ आऊँ। इसलिए अभी वहीं से आ रही हूँ।

शान्ति : (खुशी से) अच्छा तो माँ दादी बन गईं आप और श्याम हमारा बच्चे का बाप! (एक क्षण के बाद) ठीक है बच्चू, अब सुधरेगा तू। तेरी औलाद तुझे अक्ल सिखाएगी अब। बहुत खुशी की खबर सुनाई तूने माँ। अरे हाँ, हमारा मुन्ना और उसकी माँ दोनों ठीक-ठाक है न?

माँ : हाँ बेटा, ठीक हैं दोनों। तेरे बाबूजी गए हुए थे वहाँ, अपनी बहू और पोते का हाल-चाल पूछ कर आए।

शान्ति : (हैरान-सा होकर) तो क्या श्याम वहीं है, वह नहीं लौटा? अरे मैं तो उसे खास मुबारकबाद देना

चाहता हूँ। (मुस्कराता है)

मां : (श्याम की बात सुनकर एकदम उदास हो जाती है) वह गया ही कहाँ जो लौटने का सवाल पैदा हो!

शान्ति : तो क्या वह बाप बनने पर खुश नहीं हुआ? इस मौके पर भी वह अपनी पत्नी और बच्चे को मिलने नहीं गया? अजीब मूर्ख है यह तो। इस हद तक मूर्खता की उम्मीद नहीं थी मुझे उससे।

मां : तू सच कहता है बेटा। उसके ऐसे रूखे व्यवहार से उसकी पत्नी पर जो बीती होगी सो वह ही जानती होगी बेचारी, पर हमें भी शर्मिन्दा होना पड़ा है। उसकी अड़ियल जिद से तेरे पिताजी ही जानते होंगे, किस तरह भुगत कर आए वहाँ से। जिन्दगी-भर कभी झूठ नहीं बोला था, पर अपनी इस नालायक सन्तान ने वह भी बुलवा दिया!

शान्ति : (क्रोधित-सा होकर) हुआ क्या?

मां : बच्चा जिस दिन ग्यारह दिन का हो जाता है, उस दिन पूजा-हवन वगैरा करवाया जाता है जिसमें बच्चे के मां-बाप दोनों शामिल होते हैं। मणि का भाई आया था यही बताने और श्याम को बुलाने के लिए कि फलाने दिन का हवन है सो बच्चे का पिता उस दिन आ जाए। हमने बहुत समझाया, मगर श्याम के उल्टे दिमाग में सीधी बात पड़ी है कभी! वह नहीं गया तो नहीं गया। तेरे बाबूजी ने जब उसे डांट कर समझाना चाहा तो उल्टा जवाब दिया। कहने लगा, इतना ही जरूरी है जाना, तो आप ही क्यों नहीं चले जाते!

शान्ति : (आवेश में आकर) अच्छा! इतना बदतमीज हो गया है वह?

मां : क्या-क्या बातें बताऊँ मैं उसकी तुम्हारे पास। मणि

और मुझे तो कुछ समझता ही नही था, कभी कुछ समझा ही नही, पर अब तो न अपने बाबूजी का लिहाज करता है न बड़ी भाभी की परवाह। हम तो माँ-बाप हैं। हमने जन्म देने का कसूर किया है उसे, इसलिए सब सहन कर लेते हैं। मणि भी वेचारी सब अपने भाग्य का फल समझकर, चुपचाप स्वीकार कर लेती है। मगर बाकी कोई क्यों सहे ! उसकी आदत पडी हुई है। बात-बात पर मणि को डाँटने-फटकारने, नुक्स निकालने और वजह बिना वजह क्रोध करने की। अब वह तो यहाँ नही है आजकल इसलिए भाभी ही सामने आती है, तो उसके साथ भी वैसा ही व्यवहार करता है वह। लाख बार समझाया मगर···

शान्ति : (हैरान होकर बीच में ही) मगर···मगर सुशीला ने तो कभी बताया नही।

माँ : बेटा, अच्छे घरानों की लडकियाँ घरों का क्लेश मिटाने की कोशिश करती है बढाती नही। इसलिए उसने भी तुमसे कभी कुछ जिक्र नही किया होगा। तू भी इससे ऐसी कोई बात न करना।

[इतने मे दोनो घर पहुँच जाते है। सामने ही ठाकुरदास नजर आते है। वह बढकर उनके पाँव छूता है तथा दादा बनने की बधाई देता है। सब बैठ जाते है।]

माँ : (बात जारी रखते हुए) हाँ, तो मैं बता रही थी कि फिर हार कर तेरे बाबूजी को ही वहाँ जाना पड़ा। मणि के माँ-बाप ने जब श्याम के बारे मे पूछा तो क्या बताते !

[दोनों ठाकुरदास की ओर देखते हैं।]

शान्ति : क्या कहा फिर बाबूजी आपने ?

ठाकुरदास : (ठण्डी साँस भरकर) क्या कहता बेटा ! झूठ बोलना पड़ा। बहाना बनाना पड़ा कि श्याम की तबियत ठीक नहीं है। बुखार में उसको भेजना हमने ठीक नहीं समझा, इसलिए मुझे आना पड़ा। और क्या करता बेटा ! सचमुच बहुत शर्मिन्दगी उठानी पड़ी मुझे। औलाद की वजह से जिन्दगी-भर का असूल तोड़ना पड़ा। (गर्दन नीचे कर लेता है)

शान्ति : (बाप की बात सुनकर दुःखी होता है मगर उनको निराश नहीं होने देना चाहता) बाबूजी, आप निराश न हों। मैं तो माँ से भी कह रहा था कि अब उसकी औलाद ही उसे सीधा करेगी। सभी दिन एक से नहीं रहते।

[बाबूजी बेटे को अपने दुःख से दुखी देखकर एकदम अपना निराशा वाला स्वर बदलकर मुस्कराते हुए कहते हैं।]

ठाकुरदास : हाँ-हाँ, ठीक कहते हो बेटा तुम। चल उठ, कमरे में जा। बहू तेरा इन्तजार कर रही होगी यह खुशी की खबर स्वयं सुनाने के लिए। खुशी के मौके पर भी वही हमेशा वाला रोना लेकर बैठ गए सब। चल, उठ जा। शाबाश ! शान्ति की माँ, तुम कुछ चाय, दूध गर्म करके लाओ इसके लिए। भूख लगी होगी, इतनी दूर से आया है।

[सभी उठ जाते हैं।]

दृश्य सत्तरह

[शान्ति और सुशीला दोनों अपने कमरे में हैं। कमरे में दो पलंग हैं तथा साधारण-सा फर्नीचर है। एक तरफ एक बड़ी-सी अलमारी है। कोने में एक

रेडियो है तथा एक सिलाई की मशीन है। शान्ति पलंग पर लेटा कुछ सोच रहा है। इतने में सुशीला दूध का गिलास लेकर आती है। शान्ति के पलंग के पास पड़े मेज पर रखकर कहती है।]

सुशीला : ये लीजिए दूध। ज्यादा गर्म नहीं है, जल्दी पी लीजिए।

शान्ति : (उठते हुए) अभी काम खतम नहीं हुआ तुम्हारा क्या ?

सुशीला : काम खतम करके ही आई हूँ।

शान्ति : (आराम से बैठ जाता है) तो आओ, यहाँ बैठो। (अपने पास ही पलंग पर बैठने का इशारा करता है।)

सुशीला : अभी आती हूँ। (पास की अलमारी से बुन रहे स्वेटर की ऊन और सलाइयाँ लेकर आती है और शान्ति के पास आकर बैठ जाती है।)

शान्ति : (दूध पीते-पीते) यह क्या बना रही हो, इतना छोटा-सा ?

सुशीला : (मुस्कराते हुए) अपने नन्हे-मुन्ने भतीजे के लिए छोटा-सा स्वेटर बुन रही हूँ।

शान्ति : वाह ! क्या बात है ! (दूध का गिलास खतम करके वापिस रखकर मुस्कराते हुए) अरे हाँ, बहुत-बहुत बधाई जी, नन्हे मुन्ने भतीजे की ताई जी ! (शरारत से उसकी तरफ देखता है।)

सुशीला : (उसी लहजे से मुस्कराते हुए शान्ति की तरफ देख कर) आपको भी बधाई हो मुन्ने के तायाजी ! शुक्रिया बधाई देना आपको याद आया जी।

[दोनों हँसते हैं।]

शान्ति : अरे बड़ा अच्छा तुक जोड़ा तुमने।

सुशीला : आपकी शागिर्द रह चुकी हूँ न इसलिए।

[दोनों हँसते हैं।]

शान्ति : अच्छा शाली···नहीं-नहीं धर्मपत्नी जी ! अब हमारा भी जी कर रहा है कि हम भी जल्द से जल्द पिता बन जाएँ।

[उसकी तरफ अर्थपूर्ण नजरों से देखता है, वह शरमा कर नजरें झुका लेती है।]

सुशीला : क्यों, छोटे भाई से जलन होने लगी क्या ?

शान्ति : चलो, ऐसा ही समझ लो। पर सचमुच बताऊँ बात क्या है ? मैं सोच रहा था, हमारे बच्चे श्याम के बच्चों से छोटे होंगे।

[सुशीला सुनकर हँसती है।]

सुशीला : वह तो होंगे ही, पर इससे क्या फर्क पड़ता है ?

शान्ति : अरी भागवान, बहुत फर्क पड़ता है। मेरे बच्चों के बच्चे श्याम के बच्चों को ताया जी कहा करेंगे और श्याम के बच्चों के बच्चे हमारे बच्चों को चाचा। तो क्या फर्क नहीं पड़ा इससे ?

सुशीला (उसके इस भोलेपन पर बहुत हँसती है) वह तो पड़ेगा ही। श्याम की शादी हमारी शादी से पहले हुई है। आपको इतनी चिन्ता थी बच्चों के बच्चों की तो जल्दी शादी करवा लेते।

शान्ति : कसूर तो तुम्हारा ही है। तुम जल्दी ट्यूशन करवा लेती। वह मुफ्त वाली ट्यूशन।

सुशीला : (थोड़ी गम्भीर हो जाती है) तो क्या आपका मतलब है कि मैंने ट्यूशन को बहाना बनाया था आपसे शादी करवाने के लिए ?

शान्ति : अरे···अरे, गम्भीर क्यों होने लगी ! तुमने नहीं, मैंने ही ट्यूशन के बहाने तुमको शादी करके पा लिया। क्यों ठीक है न ? अब तो खुश हो ?

[सुशीला मुस्करा देती है।]

शान्ति : अच्छा देखो शील्, मेरी बात टालने की कोशिश न

करो। मैं गम्भीर होकर पूछ रहा हूँ।

सुशीला : क्या ?

शान्ति : यही कि मैं कब पिता बनूँगा ? बताओ न ?

सुशीला : मुझे क्या पता ! आप मुझसे क्यों पूछ रहे है ?

[नाराज-सा होने का नाटक करती है, वह भी उत्तर सुनकर नाराजगी दिखाता है।]

शान्ति : ठीक है नहीं पूछता। लो सो जाता हूँ।

[चादर तानकर लेट जाता है। सुशीला उसकी इस हरकत से खुश होती है। दो-तीन मिनट बाद शरारत-भरे लहजे मे पूछती है।]

सुशीला : अच्छा यह तो बताओ, दीवाली आने में कितने महीने है ?

शान्ति : मैं क्यो बताऊँ ! सामने कलैण्डर लगा है, वहाँ देख लो स्वयं।

सुशीला : क्यों, आप नही बता सकते गिनकर, कितने महीने हैं दीवाली को ?

शान्ति : (अचानक झटके से चादर हटाकर फेंकता है और उछलकर बैठ जाता है) क्या कहा ? महीने ? महीनों का चक्र शुरू हो गया है न ? (उसको पकड़कर) बताओ न शीलू ?

[सुशीला शरमाकर सिर हाँ मे हिलाती है।]

शान्ति : Oh Thank you my dear. Thank you very much. I'm too glad to hear this news. तो दीवाली की अमावस की रात को हमारे घर में हमारा चिराग नई रोशनी लेकर आएगा ! (एक क्षण के बाद) पर सत्य बताऊँ शीलू, मैं चाहता हूँ हमारे यहाँ पहले बेटी पैदा हो। नन्ही-मुन्नी सुन्दर-सी तुम्हारी जैसी प्यारी-सी। अच्छा तुम बताओ, तुम क्या चाहती हो ?

सुशीला : (शरमाकर खुश होते हुए) हमारे घर में कोई लडका नही था इसलिए मैं तो सोचती हूँ लडका पैदा हो।

शान्ति : अरे, अपने श्याम के यहाँ जो लडका पैदा हो गया। अब हमारे यहाँ तो लड़की ही पैदा होनी चाहिए।

सुशीला : ठीक है। जो भी हो, सब ठीक है। लड़का-लड़की होना कोई अपने वश की बात है क्या! बस ठीक रहे जो भी हो।

शान्ति : (अचानक गम्भीर होकर) हाँ, यह तुमने अच्छा याद दिलाया। सुनो। तुम्हे उसको ठीक रखने के लिए अभी से ख्याल रखना पड़ेगा। बच्चे की परवरिश पैदा होने से पहले पेट में ही शुरू हो जाती है।

सुशीला : आप तो ऐसे कह रहे है जैसे मैं कोई बडी लापरवाह हूँ या मुझे इन बातो का कुछ ज्ञान नही है।

शान्ति : अगर लापरवाह न होती तो मुझे कहने की जरूरत क्यों पडती।

सुशीला : (हैरान होकर) ऐसी मैंने क्या लापरवाही की, जिस के बारे मे आप कहना चाहते हैं?

शान्ति : (गम्भीर होकर) तुम अन्दर-ही-अन्दर कुढती रहती हो, दुखी होती रहती हो, भला-बुरा, फटकार सुन कर भी जुबान नही खोलती, अपना मन मार कर चुपचाप सहन करती रहती हो।

सुशीला : (हैरान-सी उसको देखती है) ये सब क्या कह रहे हैं आप? किसने बताईं आपको ये सब बातें?

शान्ति : मैंने कुछ गलत कहा है क्या? तुम न बताओ तो क्या मुझे पता ही न चलेगा? सच कहो, क्या श्याम तुम्हारे साथ यह सब ज्यादतियाँ नही कर रहा? बात-बात पर झगडता है वह तुम्हारे साथ, डाँटता-फट-कारता रहता है, और तुम उसकी ये सारी हरकतें

चुपचाप सहती रहती हो। मुझसे भी कभी जिक्र तक न किया? तुम क्या समझती हो, बच्चे के विकास पर तुम्हारी इस मानसिक पीड़ा का कोई बुरा असर नहीं होगा ?

सुशीला : आप तो बस यूँ ही बात को बढ़ा रहे हैं। यह भी कोई इतना गम्भीर मामला है ! घरों में तो यह सब चलता ही रहता है। अब मैं घर के छोटे-मोटे झगड़ों, डाँट-फटकार का ढिंढोरा पीटती रहूँ ! सब अच्छी तरह जानते हैं कि श्याम की तो आदत ही ऐसी है। अब यह उसका स्वभाव बन चुका है। कोई क्या कर सकता है !

शान्ति : (एकदम उसका तर्क सुनकर बहुत गुस्से में आ जाता है) तुमसे मुझे ऐसे मूर्खतापूर्ण तर्क की अपेक्षा नहीं थी। कम-से-कम तुम पढ़ी-लिखी लड़कियों को तो अपने सोचने के ढंग में कुछ परिवर्तन करना चाहिए। यह कोई बात हुई कि उसकी तो आदत ही ऐसी है ! (व्यंग्यात्मक) क्यों है उसकी आदत ऐसी ? इसलिए, क्योंकि उसकी इन आदतों को स्वीकार करने वाले बैठे हैं, उसके दुर्व्यवहार को सहने वाले शिकायत नहीं करना चाहते ? मगर मैं पूछता हूँ क्यों ? आखिर क्यों ? क्या तुम्हें यह सब कुछ अच्छा लगता है ? बताओ ?

सुशीला : (विवशतापूर्ण आवाज में) अच्छा न लगे तो भी क्या किया जा सकता है ?

शान्ति : (और अधिक गुस्से से) फिर वही बात। मैं पूछता हूँ किया क्या नहीं जा सकता, पर तुम औरतें कुछ करना ही नहीं चाहतीं। तुम्हें सही और गलत के बीच का अन्तर ही नहीं पता, और अगर हो भी तो भी गलत को तुम सहन करने में ही अपनी बड़ाई

समझती हो। मैं बताऊँ तुम्हें, यह सब गलत या अत्याचार या अन्याय, जुल्म सब जो औरतें घरों के अन्दर या समाज के अन्दर सहती हैं न, उसके पीछे उनकी इस अद्‌भुत सहनशीलता का मुख्य आधार होता है, उनकी यह धारणा कि यह सब सहकर हम लोग बड़ी बड़ाई देंगे, बात करेंगे कितनी सुशील, सहनशील, सती सावित्री सीता जैसी हैं जो सब कुछ चुपचाप सह कर कभी चूं तक नहीं करती। हमारे समाज ये गलत रीति-रिवाज, सती-प्रथा, बाल-विवाह, विधवापन और कारण-अकारण की जाने वाली औरतों पर ज्यादतियों के पीछे मेरे ख्याल से औरत अपने इस दुर्भाग्यपूर्ण जीवन के लिए स्वयं जिम्मेदार है। माँ श्याम की बदतमीजी को इसलिए सहन करती है कि वह उसकी माँ है, जन्म दिया है उसे, मणि इसलिए कि वह उसकी माँग का सिन्दूर है, उसका सुहाग है और किस्मत है उसकी और तुम इसलिए क्योंकि बाकी भी सह ही रहे हैं तो मैं ही उसे रोक-टोक कर क्यों बुरी बनूं। है न? यही बात है न?

सुशीला : इसमें गलत भी क्या है?

शान्ति : ठीक है, अगर गलत नहीं है तो तुम मुझे एक बात का जवाब दो। अगर माँ और मणि श्याम के साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसा वह करता है, तुम भी उसके साथ वैसी ही लापरवाही और बेअदबी से पेश आओ जैसे वह आता है तो क्या वह गलत होगा? बताओ?

सुशीला : कैसी बात करते हैं आप? ऐसे भी कभी होता है?

शान्ति : होता नहीं है न, मगर हो तो सकता है। क्या औरत एक कठोर माँ, आवारा बहन, बदचलन पत्नी और

सामाजिक कलंक नहीं हो सकती।

सुशीला : मगर हमारे समाज में औरतों को ये बातें शोभा देती हैं क्या ? कोई उनके ऐसे रूप की कल्पना भी कर सकता है क्या ? ऐसा सोचना हमारी परम्परा और सभ्यता के अनुरूप है क्या ?

शान्ति : बिल्कुल नही। हमारी संस्कृति, हमारी सभ्यता, हमारे समाज के आदर्श घर में ये बातें सोचना भी गलत है। मैं तुमसे पूर्ण सहमत हूँ। इसीलिए तो यह सवाल मैं पूछना चाहता हूँ कि समाज में यह दोहरी नीति, दोहरा दृष्टिकोण क्यो है ? औरत के विषय में यह सब सोचना अनुचित, असहनीय, मगर पुरुष के लिए सब माफ, कोई गिला-शिकवा ही नही उसके अनुचित आचरण से। क्या सभ्य, सुसंस्कृत समाज के लिए केवल स्त्री का ही सही होना पर्याप्त है, पुरुष के लिए कोई आचार-संहिता नही, कोई नियम सामाजिक बन्धन नही ? मैं जानता हूँ कल को यदि श्याम आधी रात को शराब की बोतल हाथ में लिये किसी गैर औरत के साथ भी अपनी पत्नी के कमरे मे दाखिल हो, तो उस पत्नी की हिम्मत नहीं होगी कि वह उस पति को धक्के देकर बाहर निकाल दे ? क्योंकि वह उसका पति परमेश्वर जो ठहरा। वह उसकी हर अश्लील हरकत पर पर्दा डालने की कोशिश करेगी। और उसके विपरीत यदि एक औरत ऐसी बात सोचने की भी हिम्मत करे, ऐसा कोई प्रयास करने का साहस दिखाए, तो एकदम बिना पूछे, सोचे-समझे उसे मार-मारकर घर से ही नही समाज से भी निकालकर फेंक दिया जाएगा।

सुशीला : इसमे औरतों का क्या कसूर है ? पुरुष-प्रधान समाज

में औरतें कर ही क्या सकती हैं ?

शान्ति : ठीक कहा। (व्यंग्यात्मक स्वर में) पुरुष-प्रधान समाज ! मैं मानता हूँ पुरुषों ने अपने स्वार्थ के लिए ये सब दोहरे मापदण्ड रखे। स्त्री को अपने बराबर का दर्जा देने में हिचकिचाहट दिखाता है पुरुष। मगर उसके इस स्वार्थीपन को अगर औरत ने पहचान लिया है तो उसे सहन क्यों करती है, उसे दूर करने का प्रयत्न क्यों नहीं करती ? सीधी-सी बात है, ज्यादती कोई तब तक करता है जब तक वह सहन होती है, जब विरोध होना शुरू हो जाए तो अन्याय की ताकत कम पड़ जाती है। अगर हमने गुलामी का विरोध न किया होता तो क्या अंग्रेज आजादी हमारी झोली में डालकर चले जाते ? कभी नहीं। संघर्ष करना पड़ता है। (निराश स्वर में) मगर तुम लोग संघर्ष क्यों करोगी ? अच्छे घरों की बहू-बेटियों की जुबान मुंह के अन्दर ही अच्छी लगती है। है न ? पर एक बात गौर से सुन लो सुशीला-देवी। तुम अगर यह उम्मीद करो कि मैं तुम्हारे ऐसे मूक अन्याय सहने में तुम्हारा साथ दूंगा या तुम्हारी ऐसी सहनशीलता की दाद दूंगा, तुम्हें देवी मानकर पूजूंगा या तुम्हारी बड़ाई भी करूंगा, तो तुम गलतफहमी में हो। मेरी नजरों में तुम्हारा सम्मान उसी दिन और बढ़ सकेगा जिस दिन तुम इस समाज के एक भी गलत रिवाज के खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द करने में बुजदिली से काम न लोगी। समाज की नई पीढ़ी को तो कम-से-कम इस विषय में जागरूक होना चाहिए। तुम ऐसी कभी हिम्मत करने की कोशिश तो करना, मेरा पूरा सहयोग तुम्हें मिलेगा।

सुशीला : ठीक है। मैं अपने आपको आपके विचारों, अपेक्षाओं के अनुरूप ढालने की कोशिश करूँगी। मगर मैं सोचती हूँ, कितने पुरुष हैं, जो आपकी तरह निःस्वार्थ भाव से सोचते हैं! केवल एक आपके सहयोग देने से या अकेले मेरे हिम्मत करने से ही बरसों से चले आ रहे इस सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन सम्भव है क्या?

शान्ति : ऐसा सोचना ही तो एक बड़ा Draw back है। औरों की छोड़ो, तुम स्वयं तो शुरू करो।

सुशीला : (मुस्कराते हुए) ठीक है। तो फिर (जरा अकड़ कर झूठा रौब दिखाते हुए) मेरा हुक्म है अब आप लैक्चर बन्द करके सो जाइए।

[दोनों मुस्काते हैं।]

दृश्य अठारह

[चाँदपुर गाँव से थोड़ी ही दूर पर एक छोटी-सी झोंपड़ी। आसपास और कोई घर नहीं, केवल खेत और खेतों मे से होती हुई चाँदपुर गाँव के लिए पगडण्डी। शाम का समय है। झोपड़ी के अन्दर से कुछ अस्पष्ट-सी पुरुष आवाजें मानो किसी चीज पर झगड और झपट रहे हों। अन्दर से मद्धिम-सी लालटेन की रोशनी नजर आती है। एक आदमी करीब पच्चीस-अट्ठाईस वर्ष का, हाथ में शराब की बोतल दूसरों से झपट कर खुश होकर बाहर निकलता है।]

वही आदमी : (बोतल को ऊपर करके खुश होकर, लड़खड़ाते हुए लड़खड़ाती आवाज मे) आ हा मेरी प्यारी बोतल, मेरी जान, आबरू मेरी, तुझे मुझसे कोई नही छीन सकता।

[इतने मे तीन-चार और उसी की उम्र के नौजवान वैसी ही धुत हालत मे बोतलें और

गिलास पकड़े हुए, पीते हुए बड़बड़ाते बाहर आते हैं।]

एक : अबे, कहाँ गया तू जीतराम के बच्चे, देख (बोतल ऊपर उठाकर लड़खड़ाता हुआ) मेरे पास भी पूरी बोतल है दारू की। तू क्या समझता है तू ही इस अड्डे का सबसे बड़ा पियक्कड़ है? हैं?

दूसरा : (इसके हाथ में केवल गिलास है, वह गिलास से शराब खतम करके बोतल वाले से माँगता है) दे दे न यार थोड़ी-सी। अभी तो गला थोड़ा-सा गीला हुआ है। थोड़ी-सी दे दे बस।

पहला : (थोड़ी-सी डालता है) ले गगु, ले पी। तू भी क्या याद करेगा किस रईस से पाला पड़ा था। (सिर्फ एक घूँट डालकर बोतल पीछे हटा लेता है) अच्छा यह तो बता, आज किसकी घरवाली ने बेटा पैदा किया।

एक : मेरी ने।

दूसरा : नहीं, मेरी ने।

तीसरा : अरे भगतू तेरी तो शादी भी नहीं हुई, तू झूठ बोलता है मेरी ने पैदा किया है।

चौथा : तूने तो परसों भी कहा था, आज तो सिर्फ मेरी ने किया है। मैं बाप बना हूँ आज। क्यों श्याम?

पहला : अरे-रे-रे, याद आया। श्याम के पैदा हुआ है। है न श्याम, श्यामसुन्दर बंसरी वाले! सच है न?

दूसरा : श्याम बंसरी बजाएगा। सुना दे यार बंसरी···

श्याम : (बहुत बुरी तरह नशे में धुत है) मेरी बोतल खतम हो गई किरपू, थोड़ी और दे। (गिलास उसकी ओर करता है) दे दे।

किरपू : (डालता है) अच्छी होती है न शराब श्याम! हम कहते थे न तुझे, तू मानता ही न था।

दूसरा : चल यार कोई बात नहीं। देर आए, दुरुस्त आए। है न? अब तो श्याम अपना यार हो गया पक्का।

तीसरा : तेरा बेटा बड़ा भाग्यशाली है अपने लिए दोस्त। चार दिन से पार्टी करा रहा है हम सबको।

श्याम : चुप करो, मेरा कोई बेटा नहीं है, मैं किसी का बाप नहीं हूँ, न कोई मेरा बाप है।

सभी : अरे-रे—सुनो, इसका कोई बेटा नहीं, कोई बाप नहीं, हा-हा-हा-हा! सब ठहाका मारते हैं। (दरवाजे के अन्दर झांकते हुए) अरे सुरजन ठेकेदार, सुना तूने, श्याम का कोई बाप नहीं है।

[सुरजन बाहर निकलता है और झोपड़ी के पिछवाड़े की तरफ आते-जाते कहता है।]

सुरजन : अरे कम्बख्तो, बिगाड़ दिया तुमने इस भले घर के लड़के को भी।

[उनको किसी को भी समझ नहीं आता कि अन्दर से क्या कहा गया।]

श्याम : मेरा कोई नहीं है—कोई नहीं है बस···। घर भी नहीं है मेरा तो।

बाकी : अरे यार, तू ऐसा क्यों कहता है, हम जो हैं तेरे यार सारे।

श्याम : तुम मुझे अपने घर में रख लोगे? मैं तुम्हारे साथ ही चलूँगा आज।

सारे : हाँ, हाँ, क्यों नहीं, क्यों···

[इतने मे पिछवाड़े की तरफ से सुरजन घबराया हुआ आता है और जल्दी से झोंपड़ी बन्द करके जाने लगता है।]

सुरजन : अरे शराबियो, वो देखो उधर, (हाथ से पगडण्डी पर किसी को आते हुए की तरफ इशारा करता है) श्याम का भाई मास्टर आ रहा है। कुछ शर्म-डर है

तो भाग जाओ।

सब : क्या मास्टर आ रहा है ?

[सभी लड़खड़ाते हुए बोतलें-गिलास वहीं फेंककर व कुछ साथ उठाकर एक-दूसरे को धक्के मारते हुए भाग जाते हैं। श्याम इस धक्का-मुक्की में वहीं गिर जाता है और कुछ बुड़बुड़ाता है। शराबी जब शान्ति के करीब वाले खेतों में से गुजरते हैं तो शान्ति उनकी आहट से चौंकता है व उधर देखता है।]

शान्ति : कौन है, खेतों में से इस तरह फसल बरबाद करते हुए जा रहे हो ?

[कोई जवाब नहीं आता।]

शराबी होंगे शायद ! उन्हीं को तो नहीं सूझता शराब पीकर कि वे किस रास्ते पर जा रहे हैं। अच्छे-भले इन्सान बनाया ईश्वर ने, मगर ये तो आदमी बनकर भी जानवर जैसा जीवन जीकर ही मस्त रहते हैं। न जाने क्यों और कैसे अपनी बरबादी स्वयं करने का शौक पैदा हो जाता है। पैसे की बरबादी, घर की तबाही, जान जिस्म सेहत का नुकसान और सारे समाज में बदनामी। हे भगवान, इनकी अक्ल···

[श्याम की आवाज जो अस्पष्ट-सी है, सुनाई देती है।]

शान्ति : हैं (आवाज सुनने की कोशिश करता है) एक-आध अभी यहीं पर भी पड़ा है। नरक बना रखा है अपना जीवन इन्होंने।

श्याम : (आवाज कुछ स्पष्ट-सी हो जाती है जैसे-जैसे शान्ति करीब पहुँचता है) मुझे ले चलो अपने साथ। मैंने कहा न, मेरा कोई नहीं है। तुम भी चले गए···

शान्ति : अरे आवाज तो श्याम के जैसी लग रही है, कहीं श्याम ही तो नहीं ? (सोचकर ही सदमा-सा लगता है और वह इस विचार के भय से ही कांप जाता है) नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। वह मेरा भाई है—हमारे घर का बेटा। मैं भी कैसा पागल हूँ, अपने श्याम के लिए ही क्या सोचने लगा ! अभी पास जाकर देखता हूँ, कौन है यह नशे में धुत पड़ा हुआ।

[वहाँ पहुँचकर जब शान्ति श्याम को नशे में बेसुध पड़ा हुआ देखता है तो उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं आता। एक क्षण के लिए सारी दुनिया उसे घूमती नजर आती है। वह अपने भाई को सामने देखकर भी विश्वास नहीं करना चाहता। मगर सच्चाई उसे मजबूर करती है।]

श्याम : (लड़खड़ाती आवाज में) ले चल मस्तु मुझे। तू आ गया मुझे अपने घर ले जाने। तू मेरा पक्का यार है। चल मैं तेरे साथ चलूँगा। (उठने की कोशिश करता है।)

[शान्ति उसे सहारा देकर उठाता है। श्याम पूरी तरह से बेसुध उसके कन्धों पर लड़खड़ा जाता है। शान्ति उसका बोझ सँभाल कर उसे अपने साथ घर की तरफ ले जाता है।]

श्याम : (चलते-चलते बुड़बुड़ाता है) मैंने बताया तुझे मस्तु—मेरा कोई नहीं। सब मुझे आवारा समझते है घर मे। मुझे पैसे नहीं देते। डाँटते है। तू बोल, मैं कोई आवारा हूँ ? मैंने क्या किया ? सब मुझे अपना दुश्मन मानते है। ठीक है, वे भी मेरे दुश्मन हैं। अब मैं वहाँ कभी नहीं जाऊँगा। मैंने कह दिया

है उनको—मैं अब कभी नहीं जाऊँगा। मैं तेरे साथ रहूँगा मस्तु—ठीक है न! तू तो मेरा यार है। रखेगा न तू मुझे अपने घर में!

[*शान्ति जब कोई जवाब नहीं देता तो श्याम खड़ा हो जाता है और आगे न जाने के लिए अकड़ जाता है।*]

श्याम : बोल रखेगा न? नहीं बोलता—तो जा मैं तेरे साथ भी नहीं जाऊँगा।

शान्ति : (गुस्से और दुःख के कारण कुछ बोलना उचित नहीं समझता। आँखों में क्रोध और आँसू तैर रहे हैं मगर शराबी की जिद को समझते हुए कहता है) हाँ-हाँ रखूँगा। चल अब।

श्याम : ठीक है। तो फिर चल…

[दोनों चले जाते हैं। शान्ति श्याम को घर के अन्दर चुपचाप ले जाकर उसके बिस्तर में डाल देता है। वह कोशिश करता है कि माँ और बाबूजी श्याम को इस हालत में न देखें। इसलिए वह उसे बिना कोई आवाज किए सावधानी से सुला कर उसके कमरे से बाहर आता है। मगर जैसे ही बाहर निकलता है, *नजर गाँव की दाई सावित्री को छोड़ने आँगन तक जा रही अपनी माँ पर पड़ती है।*]

सावित्री : मास्टर की अम्माँ, तुम फिकर न करो, सब ठीक है। शुक्र करो भगवान का, जिसने बुरा होते-होते बचा लिया। जरा-सा जोर से गिरती तो बच्चे की जान को पेट के अन्दर जरूर नुकसान होता। अब सब ठीक है। अच्छा किया, तुमने मुझे बुला लिया। जाओ, अब बहू के पास जाओ, मैं चली जाऊँगी।

अब फिकर करने की कोई जरूरत नही है।

[जैसे ही माँ उसे विदा कर वापिस अन्दर जाने के लिए मुड़ती है, उसकी नजर सामने खड़े हुए शान्ति पर पड़ती है। अचानक इस तरह उसे वहाँ देखकर वह सकपका-घबरा-सी जाती है।]

माँ : शान्ति बेटा तुम? कब आए तुम?

[शान्ति आगे बढ़ कर पाँव छूता है। माँ आशीर्वाद देती है।]

शान्ति : अभी-अभी आया हूँ माँ! यह अभी-अभी तुम अपने गाँव की दाई सावित्री को छोड कर आ रही हो न?

माँ : (सच को छुपाना व्यर्थ समझकर) हाँ, यह दाई ही थी।

शान्ति : (आशंकित हो जाता है) मगर…मगर क्यों? क्या बात है? घर मे सब ठीक है न? सुशीला कहाँ है?

माँ : (नजरें झुक जाती हैं, धीरे से कहती है) अन्दर है, कमरे मे लेटी हुई है।

शान्ति : (हैरान होकर) लेटी हुई है? मगर क्यों? क्या हुआ?

[जल्दी से अपने कमरे की तरफ बढ़ता है। पीछे-पीछे माँ भी जाती है।]

शान्ति : सुशीला!

माँ : रुक जा बेटा। मत जगा, अभी-अभी नींद आई है हलकी-सी उसे। थोड़ा आराम करने दे। इधर आ जा इस कमरे मे, तेरे बाबूजी भी यहीं बैठे है।

[शान्ति को कुछ समझ नहीं आता कि आखिर माजरा क्या है। वह एक नजर लेटी हुई सुशीला पर डाल कर वापिस मुड़ कर

साथ वाले कमरे में चला जाता है। वहाँ उसके बाबूजी गुमसुम-से बैठे हैं। पास ही उनका हुक्का पड़ा है। शान्ति उनके पाँव छूता है।]

ठाकुरदास : (आशीर्वाद देकर) आओ बेटा, यहाँ बैठो। कब पहुँचे ?

[माँ भी वहीं चुपचाप बैठ जाती है।]

शान्ति : अभी थोड़ी देर पहले पहुँचा हूँ। मगर आप यहाँ इस तरह चुपचाप अकेले कमरे में बैठे हैं, सुशीला उधर सो रही है'''माँ ''दाई यह सब क्या है, मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा ? मेरा तो दिल घबरा रहा है, आखिर बात क्या है—उधर वह श्याम''' माँ'''बाबूजी कुछ बताओ तो सही, क्या बात है ?

ठाकुरदास : क्या बताएँ बेटा, कुछ रह ही नहीं गया अब बताने के लिए। मैं तो शर्मिन्दा हूँ अपने आप से, तुम सबसे ! आखिर ये दिन भी देखने थे। हे भगवान '''तूने'''

शान्ति : (और अधिक घबरा जाता है) माँ, तुम्हीं कुछ कहो न आखिर ऐसा क्या हो गया (बीच में ही) जिसे तुम मुझसे भी छिपाना चाहते हो ?

माँ : छुपाना भी चाहें तो भी कितनी देर छुपा सकते हैं बेटा। सच्चाई तो सामने आ ही जाती है।

शान्ति : तो फिर बता भी दो, कि बात क्या है।

ठाकुरदास : बता क्यों नहीं देती शान्ति की माँ, आखिर कितनी देर न बताओगी ?

माँ : (ठण्डी साँस भरकर) पिछले बुधवार वाले दिन श्याम शराब पीकर लड़खड़ाता हुआ घर आ गया। उसको इस हद तक बिगड़ते देखकर सबको सदमा लगा। पहले तो विश्वास ही न आया। मगर सच्चाई तो सच्चाई थी। अगली सुबह जब इन्होंने

(पति की ओर इशारा करके) पूछा, डांटा तो बोला—मैंने शराब नही पी, नहीं पीना चाहता था, *मगर दोस्तों ने जबरदस्ती पिला दी। मजबूर किया* —कहने लगे, तू बेटे का बाप बना है, हमें पार्टी दे। सो जबरदस्ती पिलानी और पीनी पड़ी। हमने भी *बात समझने की कोशिश की। मगर उसके बाद* पिछले तीन दिनों से लगातार यही हाल है। रोज देर रात गए लड़खड़ाता हुआ आ जाता है। न खाने की सुध है, न बात करने का पता। (रुआँसी होकर रुँधी आवाज में) यह सोच-सोच कर कलेजा मुँह को आता है कि अब इस तरह रोज-रोज पीकर इसे पक्की लत पड जाएगी। हमारा घर तबाह हो गया बेटा—बहुत इज्जत, बड़ा नाम था हमारा पूरे पाँच-सात गाँवों मे। (फफक-फफक कर रो पड़ती है, फिर थोड़ा सँभालते हुए) आज सुबह सुशीला रसोई में खाना बना रही थी। मेरा व्रत था बोला चौथ का। (फिर रोनी आवाज में) लड़कों की माएँ रखती हैं यह व्रत बेटों की सुख-समृद्धि के लिए, *लम्बी उम्र के लिए। मेरे बेटे को न जाने किसकी* नजर लग गई। (फिर रोती है। एक क्षण के बाद संयत होते हुए) तो मैंने सुशीला को कहा, कि जब तक तुम खाना बनाती खिलाती हो, मैं गाँव मे जाकर गाय का पूजन कर आती हूँ। अपने घर में *गाय के साथ बछिया है,* बछड़े की माँ वाली गाय का ही पूजन होता है इस व्रत मे। पूरे गाँव में सोमा के घर ही ऐसी गाय है। सो मैं वहाँ पूजन के लिए चली गई। बहू ने खाना बनाया और अपने ससुर और देवर दोनो के लिए परोस दिया। दोनो चुपचाप खा रहे थे। इतने मे श्याम ने कहा,

"बाबूजी, मुझे बीस रुपए चाहिए।" तेरे बाबूजी ने पूछा, "किसलिए?" तो कहने लगा, "बस चाहिए।" तो इन्होंने कहा, "क्यों, शराब पीनी है न?"

श्याम : पिलानी भी है मुझे अपने दोस्तों को। वे रोज मुझसे झगड़ा करते हैं। कहते हैं, तेरे घर बेटा पैदा हुआ है, इस खुशी मे पार्टी दे।

ठाकुरदास : तो खुशी शराब पीकर और पिलाकर ही मनाई जाती है क्या?

श्याम : मगर मैं उनको नाराज नही कर सकता। उनकी खुशी के लिए उनकी बात तो माननी ही पड़ेगी।

ठाकुरदास : मगर तुझे भी खुशी है क्या बेटा पैदा होने की?

श्याम : देखिए बाबूजी, आप फिर वैसी बातें करने लगे, मैं फिर मे उस बहस में नहीं पड़ना चाहता। मुझे पैसे चाहिए। सीधी-सी बात है। बीस रुपए मांगे हैं, कौन-सा सौ-दो सौ मांग रहा हूँ।

ठाकुरदास : शराब के नाम पर मेरे पास तुम्हे देने के लिए फूटी कौडी भी नही है। बेशर्मी की हद हो चुकी है श्याम। देखना एक दिन तुम पछताओगे वरना अपनी गलत सोसायटी को छोड कर सही रास्ते पर लौट आओ।

[गुस्से में खाना बीच मे ही छोड कर खड़ा होते हुए।]

श्याम : बस-बस बाबूजी, बहुत हो गया लैक्चर। साफ-साफ क्यों नही कहते कि मेरे लिए आपके पास कुछ नही। मैं आपका लगता ही कुछ नहीं?

ठाकुरदास : (उसी तरह गुस्से में) हाँ-हाँ, यही समझ

लो। ऐसी आवारा बदचलन बिगड़ी हुई औलाद को अपना बेटा कहने में शर्म आती है मुझे।

श्याम : (गुस्से से पैर पटकते हुए) ठीक है। ऐसी बात है तो मैं जा रहा हूँ। कभी लौट कर नहीं आऊँगा।

[जाने लगता है मगर सुशीला उठ कर आगे बढ़कर उसे रोकने की कोशिश करती है।]

सुशीला : रुक जाइए देवर जी। इस तरह गुस्से में यूँ खाना छोड़कर मत जाइए। बाबूजी आपकी भलाई के लिए ही कह रहे है।

श्याम : हाँ-हाँ, मैं जानता हूँ सबको। मेरी भलाई की कितनी फिकर है। तुम भी तो इन्हीं की तरह से कहोगी। मैं लगता ही क्या हूँ तुम सबका! दुश्मन हूँ सारे घर का। सब यही चाहते हैं कि मैं यहाँ से चला जाऊँ। लो—जा रहा हूँ। अब सभी चैन-सुख-आराम से रहना।

[फिर आगे बढ़ने लगता है मगर सुशीला उससे आगे बढ़कर उसका फिर रास्ता रोकने की कोशिश करती है।]

सुशीला : नहीं, देवर जी, आप गलत न समझिए। गुस्सा थूक दीजिए। बाबूजी के कहने का यह मतलब नहीं था।

श्याम : (और ज्यादा गुस्से में) मैं कह रहा हूँ भाभी हट जाओ मेरे रास्ते से। मैं खूब अच्छी तरह समझता हूँ इनके मतलब। तुम ज्यादा बातें न बनाओ। हटो! (हटाने की कोशिश करता है)

सुशीला : नहीं! मैं हाथ जोड़ती हूँ आपके, इस तरह घर छोड़ कर न जाइए।

ठाकुरदास : नहीं बहू, इसके आगे इस तरह हाथ मत

जोड़ो, यह लक्ष्मण जैसा देवर नहीं है जो सीता भाभी की कद्र करना जानता हो। करने दो इसे जो इसका दिल करना चाहे।

श्याम : (और अधिक गुस्से में आकर) ठीक है, हटो।

[जोर से धक्का देकर उसे अपने रास्ते से हटाकर पैर पटकता हुआ चला जाता है। सुशीला अचानक उस जोर के धक्के से सँभल नहीं पाती और दरवाजे के बीच गिर पड़ती है। उसका सिर जोर से लकड़ी की दहलीज में टकराता है और वह बेहोश हो जाती है। सुशीला को इस तरह गिरते और बेहोश देखकर ठाकुरदास घबरा कर उसके पास आकर उठाने की कोशिश करता है। घर में और कोई नहीं है। इतने में अचानक पड़ोसियों की लड़की मीरा किसी काम से वहाँ आती है। ठाकुरदास उसकी मदद से सुशीला को उठाकर उसके कमरे में बिस्तर पर लिटा देते हैं और मीरा को दौड़ा कर शान्ति की माँ को फौरन बुलाते हैं। वह सुनते ही पूजन बीच में छोड़कर चली आती है। बहू की हालत देखकर वह ठाकुरदास को दूध गर्म करने के लिए कहती है। मीरा को गाँव में भेजकर दाई सावित्री को बुलाती है और स्वयं सुशीला के ठण्डे हुए हाथ-पाँव की जोर-जोर से मालिश करती है। फिर दाई आकर उसे देखती-जाँचती है। उसके पेट की थोड़ी मालिश वगैरा करती है। सुशीला होश में आ जाती है।]

दृश्य उन्नीस

[शान्ति और सुशीला अपने कमरे में।]

शान्ति : अब कैसी तबियत है तुम्हारी ?

सुशीला : मैं तो बिल्कुल ठीक हूँ। मुझे तो कुछ भी नहीं हुआ, बस जरा-सा···!

शान्ति : (खीझते हुए) बस-बस रहने दो। मैंने यह तो नहीं पूछा क्या हुआ तुम्हें। मुझे सब पता चल चुका है।

[दो क्षण दोनों चुप रहते हैं।]

सुशीला : कसूर मेरा ही है। मैं स्वयं को सँभाल ही न पाई देवर जी ने आगे से हटाया तो मैं यूँ ही गिर पड़ी।

शान्ति : और यूँ ही बेहोश भी हो गई ! है न ?

सुशीला : (मुस्कराते हुए) मगर अब तो बिल्कुल ठीक हूँ। और आपका बच्चा भी। (उसको मनाने के उद्देश्य से कहती है।)

शान्ति : तुम्हें याद है, पिछली बार जाते-जाते मैंने तुमसे यही कहा था कि अपना पूरा ख्याल रखना। यह केवल तुम्हारी अकेली जान का सवाल नहीं है, बच्चे पर तुम्हारे सोचने-समझने, शान्ति-अशान्ति, सुख-दुःख, अच्छे-बुरे सब का बराबर असर होगा। कहा था न ?

सुशीला : हाँ ! मगर अब सब ठीक है, आप विश्वास क्यों नहीं करते !

शान्ति : बहुत कर लिया विश्वास ! अब तो एक ही रास्ता बचा है मेरे पास।

सुशीला : (घबराकर) क्या ?

शान्ति : तुम्हे कल मेरे साथ चलना होगा।

सुशीला : कहाँ ?

शान्ति : जहाँ मैं रहूँ, वहीं रहोगी तुम।

सुशीला : इस तरह घर छोडकर जाना अच्छा होगा क्या ? माँ-बाबूजी अकेले नही रह जाएँगे यहाँ ? और लोग भी क्या कहेंगे ? लोग आपके बारे में बातें करेंगे— सबके घर के झगडे सुलझाता था, सबको समझाता था—प्रेम से रहो, इकट्ठे मिल-जुल कर रहो, शांति से रहो और अब जब अपनी बारी आई तो एक ही बार में घर छोड़ दिया। माँ-बाप को अकेला पीछे बेसहारा छोड़ कर पत्नी का हाथ थामकर चला गया ?

शान्ति : तो क्या करूँ मैं ? मेरे पास इस समस्या का और कोई समाधान नही है। (दोनों हाथों से सिर पकड़ कर झुंझलाता हूँ।)

सुशीला : (उसे शान्त करते हुए) इस समय आप काफी परेशान है। शान्त हो जाइए। आराम कीजिए अब। सुबह उठकर सोच लेंगे, क्या करना है।

[शान्ति उसकी बात मान कर लेट जाता है। सुशीला भी सो जाती है। शान्ति सोने की कोशिश करता है, मगर चिन्ता मे डूबे होने की वजह से नीद नही आती। सुबह सवेरे-सवेरे जब शान्ति खेतों की तरफ से घूम कर आता है तो सुशीला जाग चुकी होती है मगर लेटी होती है। शान्ति कमरे मे पहुँच कर उससे बात करता है।]

शान्ति : कैसी तबियत है तुम्हारी ?

सुशीला : (उठते हुए) ठीक हूँ। एकदम ठीक। बस थोड़ा-सा पीठ मे दर्द और कमजोरी महसूस हो रही है। परी चिन्ता की कोई बात नही है। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। उठती हूँ, जाकर आपके लिए चाय-नाश्ता बनाती हूँ। जाना भी है न आपको। (उठ कर जाने लगत

है।)

शान्ति : (उसे रोकते हुए) ठहरो शीला, सुनो। बैठ जाओ। (वह उसके पास चारपाई पर बैठ लेती है) मैं अपना रात वाला फैसला न बदल सका। मुझे सारी रात नींद नही आई। सोचता रहा, कोई और हल ढूंढने की बहुत कोशिश की, मगर कुछ भी और समझ में न आया। इसलिए अब तुम्हें मेरे साथ चलना होगा। चलोगी न ?

सुशीला : (एक क्षण चुप रहती है और सोचती है) ना कैसे कर सकती हूँ ! अगर आपने पूरी तरह सोच-समझ कर यही फैसला किया है, तो मुझे आपसे ज्यादा समझ थोड़ी है जो मैं इसे गलत कहूँ। ठीक है ! अगर आपका यही आदेश है तो मैं जरूर चलूँगी आपके साथ। आप मेरे पति हैं, आपकी हर आज्ञा का पालन करना ही मेरा धर्म है।

शान्ति : मुझे गलत न समझना शीला। और कोई चारा नही है सिवा घर छोड़ने के, इस माहौल से दूर जाने के। पर इसका मतलब यह नही कि हम हमेशा के लिए यह घर छोड़ देंगे। यह तो केवल···

सुशीला : (बीच में ही, अपने अन्दर के विरोध को दबाते हुए) अगर आप हमेशा के लिए भी कहें तो भी क्या मैं न कर सकती हूँ !

शान्ति : तो ठीक है। उठो, सामान बांधो, अपने कपड़े वगैरा।

[दोनों सामान बांधते हैं, एक-दो ट्रंक कपड़ों के तैयार करके और स्वयं भी तैयार होकर नीचे आँगन में निकल आते है। इतने में दूसरी तरफ से माँ दो गिलास दूध के हाथ में लिए रसोई से बाहर आती है। आँगन के

एक कोने में बैठे हुए हुक्का पी रहे ठाकुरदास की नजर अचानक शान्ति और सुशीला पर पड़ती है। माँ जैसे ही उनके कमरे की तरफ बढ़ती है, दरवाजे के पास आँगन में सामान के साथ तैयार होकर खड़े बहू, बेटे पर नजर पड़ती है। उसे कुछ समझ नहीं आता कि यह मामला क्या है। ठाकुरदास भी उसी तरह हैरानी वाली नजरों से उनको देखता है।]

माँ : (उन दोनों से) ये लो बेटे दूध। मैं तो तुम्हारे कमरे की तरफ जा रही थी कि देखूँ बहू का क्या हाल है। मगर यह क्या बहू तुम तो तैयार होकर खड़ी हो! कहीं ले जा रहे हो शान्ति बेटा इसे? यह ट्रंक वगैरा ···यह सब कहाँ की तैयारी है?

[ठाकुरदास भी हुक्का छोड़कर उनके करीब आकर मामले को समझने की कोशिश करते हैं।]

ठाकुरदास : बहू, तबियत ठीक है न तुम्हारी?

सुशीला : जी, बाबूजी, मैं ठीक हूँ।

ठाकुरदास : तो फिर कहाँ जा रही हो तुम?

[सुशीला कुछ जवाब नहीं देती, नजरें नीचे गढ़ा लेती है। अन्दर के कमरे से श्याम बाहर निकलने लगता है, मगर दरवाजे के पास आते ही जैसे ही नजर कहीं जा रहे भैया-भाभी और पास हक्के-बक्के खड़े माँ-बाबूजी पर पड़ती है तो आगे बढ़ने की बजाय उसके कदम पीछे हट जाते हैं। वह घबरा-सा जाता है और वहीं दरवाजे के पीछे खड़ा होकर बाहर हो रही बातचीत को सुनने का प्रयास

करता है।]

शान्ति : बाबूजी, मैं सुशीला को अपने साथ ले जा रहा हूँ।

ठाकुरदास : क्या मायके छोड़ने जा रहे हो बहू को ?

शान्ति : नहीं माँ, अपने साथ ही रखूँगा।

ठाकुरदास : इसका मतलब तुम दोनों यह घर छोड़कर जा रहे हो ?

शान्ति : (झिझकते हुए) नहीं बाबूजी, ऐसी बात तो नहीं है, मगर…

माँ : (बीच में ही) मगर क्या ? मैं भी समझ गई बेटा अब। ठीक कह रहे है तुम्हारे बाबूजी। तुम दोनों घर छोड़ कर जा रहे हो। ठीक है न ?

[प्रश्नसूचक नजरों से शान्ति को देखती है। ठाकुरदास भी उसी तरह उसे देखता है। जवाब में शान्ति कुछ नहीं कहता बस नजरें झुका लेता है।]

माँ : सब समझ गई बेटा ! (ठण्डी साँस भर कर) ठीक ही तो है। भला क्या जरूरत है बेगानी लड़की को हमारी गलतियों की सजा भुगतने की। हम दोनों जो हैं यहाँ—माँ-बाप उसके, अपने किए के फल पाने के लिए। मगर इतना तो तू भी जानता ही होगा कि अगर हम ही है जिम्मेदार उसको बिगाड़ने के तो तू भी हमारा ही बेटा था, श्याम का भाई। क्या माँ-बाप अपने बच्चों से अलग-अलग व्यवहार करते और गलत-सही रास्तों पर भेदभाव करके डालते हैं ? (रुआँसी आवाज में) पर छोड़, ये बातें क्या तुझे बताने की हैं ! पत्नी इसकी पहले ही अपने मायके चली गई है, अच्छा ही हुआ। वह भी अब क्यों वापिस आएगी ? उसने भी क्या ठेका ले रखा है, सारी उमर इस तरह घुट-घुट कर जीने का ? वैसे

भी किसको पड़ी है कि उसे बुलाने जाए। तुम दोनों भी जा रहे हो—जाओ। हम कैसे रोक सकते हैं तुमको। तुम दोनो समझदार हो, पढे-लिखे हो, सोच-समझ कर ही फैसला किया होगा तुमने। जाओ ...*(अधिक रुंधी हुई आवाज में)* हम दोनो हैं यहां। उसके मां-बाबूजी। हम कहां जा सकते हैं, उसको छोड़ कर, घर-बार छोड़कर! यही रहेंगे, सब सहेंगे, बेटा है न वह हमारा, शायद किन्ही पिछले जन्म के पापों का दण्ड देने के लिए भगवान ने उसे हमारे पास पैदा किया। सो भुगतेंगे बह सजा जब तक जीते हैं। (ज़ोर-ज़ोर से सुबकती है।)

[इतने मे श्याम अन्दर से अचानक बाहर आ जाता है और मां से माफी मांगता है, मगर सब उसकी तरफ नफरत से देखते हैं।]

[शान्ति मां के पास जाकर चुप कराने की कोशिश करता है। उधर मणि के पिताजी अचानक आंगन मे प्रवेश करते-करते रुक जाते हैं, और आंगन मे चल रहे गम्भीर वार्तालाप को सुनने का प्रयास करते है।]

शान्ति : मां इस तरह दिल छोटा न करो। मैंने भी दिल पर पत्थर रख कर ही यह फैसला किया है। सारी रात सो न पाया, सोचता रहा, सारी घटनाएं और श्याम का वह रूप जो मैंने कल देखा, सब कुछ आंखों के सामने घूमता रहा। जब और कुछ समझ न आया तो हार कर यही फैसला करना पडा। सुशीला जिस हालत मे है, वह तो तुम जानती ही हो। कुछ हो जाता या कल को फिर ऐसी कोई घटना हो जाए, तो मैं तो इसके पिताजी को मुंह दिखाने लायक भी न रहूंगा। इसीलिए मजबूरन यह

फैसला करना पड़ा।

[इतने मे ही आँगन के गेट की तरफ से मणि के पिताजी आँगन मे प्रवेश करते है, उन्हें इस तरह अप्रत्याशित रूप से सुबह-सुबह अचानक ऐसे मौके पर आया देखकर सभी भौचक्के रह जाते है, वार्तालाप के विषय को सोचकर सबके पैरो से मानो जमीन खिसक जाती है। श्याम की माँ जल्दी से आँखें पोछती है।]

मणि के पिताजी : (उनकी तरफ बढ़ते-बढ़ते) वाह, मास्टर साहब बहुत खूब! शाबास! शुक्र है एक भाई को तो कम-से-कम यह अहसास है कि इस घर मे ब्याही हुई पराई लड़कियाँ भी किसी माँ-बाप की औलाद हैं, जिन्होने बड़े विश्वास और इज्जत के साथ आप लोगों के हाथ उनकी जिन्दगी, उनका भविष्य सौंपा है।

[सभी के चेहरे फक पड़ जाते है, जब उन्हें महसूस होता है कि समधी ने सारी बात सुन ली है। ठाकुरदास आगे बढ़ कर उनके पास जाते है और उन्हे अन्दर लिवा लाने के प्रयास से कहते हैं।]

ठाकुरदास : आइए-आइए समधी जी! आज अचानक, सुबह-सुबह आप···

समधी : हाँ, हाँ, आपका हैरान होना सही है। भला लड़की के बाप का बेटी की ससुराल में क्या काम! सचमुच मुझे नही आना चाहिए था यहाँ। पर अगर हालात मुझे न भेजते तो सच्चाई पर से पर्दा कैसे हटता! हम तो बड़े सुख-आराम से निश्चिन्त होकर बैठे है घर में कि हमारी बेटी बड़े सुख मे है, शरीफ

घराने में इज्जतदार लोगों के पास है, कोई दुःख-तकलीफ, तंगी-परेशानी नहीं है उसको। पर यहाँ जो हाल है, उसकी तो कल्पना करना भी मुश्किल है। और उस भोली-भाली बेजुबान गऊ ने कभी जुबान न खोली अपने माँ-बाप के आगे कि उसको कोई तंगी-तकलीफ है। अब भी कैसे पता चलता मुझे अगर इधर आना न होता। उस दिन पूजा वाले दिन जब मुंशी जी आप हमारे घर आए थे तो आपने बताया कि आपका बेटा इसलिए न आ सका क्योंकि वह बीमार है, ठीक नहीं है। हमने भी सच मान लिया। इतने दिनों से जब आपने यहाँ से बाद में कोई खबर न भिजवाई तो मणि कहने लगी, पिताजी मुझे उनके स्वास्थ्य की चिन्ता हो रही है, इसलिए आप स्वयं जाकर देख आओ, तब तसल्ली होगी। मुझे भी उसकी बात उचित लगी और मैं कल चला आया। कल शाम को ही यहाँ आकर वापिस जाने के लिए सोचकर चला था, मगर रास्ते में मणि के मौसाजी मिल गए। वे जबरदस्ती घर ले गए और रात को ठहरा लिया। आपके साथ वाले गाँव में ही तो घर है उनका। बस वहीं सब हाल-चाल मालूम हो गया अपने जँवाई साहब का, उनकी सेहत का और उनकी तबियत का। सब कुछ पता लग जाने के बाद भी यकीन नहीं हुआ, इसलिए यहाँ चला आया कि शायद लोग झूठ बोलते हों। मगर (ठण्डी साँस भर कर) अब तो आँखें अच्छी तरह खुल गईं मेरी। क्या रह गया अब विश्वास न करने के लिए? (एकदम आवेश में आते हुए) मगर मैं पूछता हूँ आप सब से—क्या कसूर है मेरी बेटी का? क्यों उसे ऐसी सजा दी जा रही है? क्या कमी है मेरी बेटी में जो

आपका बेटा उसके साथ ऐसा सलूक कर रहा है ?

[शास्त्री जी को इस तरह आवेश में आया देखकर सभी घबरा जाते हैं व बात को सँभालने की कोशिश करते है।]

ठाकुरदास : नहीं-नहीं, शास्त्री जी, आपकी बेटी में कोई कमी नहीं है, वह तो बहुत गुणवती व समझदार है।

शास्त्री : तो ऐसी कद्र, ऐसा सलूक करते हैं आप लोग गुणवान और समझदार इन्सान के साथ ?

माँ : (शर्मिन्दगी-भरी आवाज में) हमें माफ कर दीजिए समधी जी, क्या करें ! अपना सिक्का खोटा है, भाग्य की बात है, क्या करें ! कोई वश नही चलता।

शास्त्री : तो इसीलिए भाई-भाभी इस माहौल से बचने के लिए घर छोड़ कर जा रहे है ! (व्यंग्यात्मक आवाज में) मगर मेरी बेटी के लिए कौन-सा रास्ता है, वह कहाँ जाएगी···?

माँ : नही-नही, ऐसा मत सोचिए, वह कहीं नही जाएगी, यहीं रहेगी, अपने घर में···

शास्त्री : (कठोर स्वर में) नहीं। अब वह भी यहाँ नहीं रहेगी। नही भेजूँगा मैं उसको यहाँ। मेरे घर में उसके लिए कोई कमी नहीं है। (विवशता-भरी आवाज में) समाज का क्या है, चार दिन बातें बनाएँगे लोग, पर अपनी बेटी तो आँखों के सामने रहेगी, तसल्ली तो होगी कि वह ऐसे दुःख में नहीं, चुपचाप मानसिक पीडा में तो नही स्वयं को तिल-तिल गला रही। जो रूखा-सूखा हम खाएँगे, उसके भाग्य से उसे भी और उसके बच्चे को भी जरूर मिलेगा। हाँ, जरूर मिलेगा इज्जत के साथ व प्यार के साथ। (कहते-कहते आवाज पूरी तरह भर्रा जाती है और आँखें छलक आती हैं।)

ठाकुरदास : (भर्राई आवाज में हाथ जोड़कर) हम बहुत शर्मिन्दा हैं शास्त्री जी। पर आप तो बहुत समझदार हैं। ऐसा कठोर फैसला मत लीजिए, मैं आपके हाथ जोड़ता हूँ···।

माँ : (हाथ जोड़ कर) भगवान के लिए हमें अपनी बहू और पोते से जुदा करने की बात मत सोचिए। मणि हमारी बेटी है, वह इस घर की लक्ष्मी है, सचमुच मणि है वह! और वह पोता हमारा इस घर का चिराग है। आप (हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाती है) हमारे घर की रोशनी को हमसे अलग करके इस घर को अँधेरे में न धकेलिए···।

शास्त्री : (अकड़ते हुए) आप क्यों शर्मिन्दा होती हैं बहन जी! जब आपके बेटे को ही अपनी पत्नी और बच्चे की जरूरत या परवाह नहीं, तो आप भी क्यों इतना दुःखी होती हैं! मेरी बेटी भी सीख जाएगी धीरे-धीरे पति के बिना रहना। हम भी मन मना लेंगे यह सोचकर कि हमारी बेटी की तकदीर ही ऐसी थी ···अच्छा, मैं चलता हूँ···

ठाकुरदास : (रोकते और गिड़गिड़ाते हुए) नहीं-नहीं, आप इस तरह न जाइए···माफ कर दीजिए हमें···

[उसी समय इतनी देर से चुप खड़ा श्याम आगे बढ़ता है और अपने ससुर के आगे हाथ जोड़ता है।]

श्याम : (नजरें नीची किए हुए) माफ कर दीजिए मुझे, मुझसे बहुत बड़ी भूल हुई है। बहुत ग्लानि हो रही है मुझे अपने आप से यह सोच कर कि केवल एक मेरी वजह से आप सब लोग कितने दुःखी हुए हैं। मुझे कभी इस बात का अहसास ही नहीं हुआ आज तक। मैं तो बहुत बड़ा पापी हूँ, जिसने अपने देवता जैसे

माता-पिता का दिल इतना दुखाया है। (भावुक हो जाता है) मुझे माफ मत करना आप। मैं माफी के लायक ही नहीं हूँ। जिस सन्तान की वजह से माँ-बाप का सिर शर्म से झुक जाए, उस सन्तान से तो नि सन्तान होना अच्छा है।

[ठाकुरदास और माँ रो पड़ते है, उधर सामने खडे शान्ति और सुशीला की आँखें भी छलछला जाती हैं।]

बहुत कठोर सजा दीजिए मुझे आप। मैं हकदार हूँ सजा का। मैं सदा आपको दुखी करता रहा और आप चुपचाप सहते रहे, कैसे माफी माँग सकता हूँ मैं आपसे! कैसे माफ कर सकेंगे आप मुझे!

[माँ-बाबूजी के पैरों पर रोते-रोते गिर पड़ता है, वे उसे उठाते है।]

ठाकुरदास : (रुँधी आवाज में) माफी तो उनसे (मणि के पिता की ओर इशारा करके) माँग जाकर, अगर वह माफ कर दें तुझे।

[श्याम अपराधी वाली नजरों से उनकी तरफ देखता है और करीब जाकर रोती हुई आवाज मे हाथ जोड़ कर कहता है।]

श्याम : मैं किस मुँह से आपसे माफी माँगूँ। आपकी बेटी तो चाँद है जो मेरे जैसे कठोर ग्रहण के साथ जुड़ी रह कर भी अपनी शीतल चाँदनी ही बिखेरती रही, इस घर में। मैं तो न उसके लायक था, न हूँ। एक बहु-मूल्य हीरे की मैंने पत्थर के समान बेकद्री की, मुझसे बड़ा अभागा और मूर्ख कोई और होगा इस दुनिया में! नहीं···मैं आपकी बेटी के लायक नहीं हूँ।

[शास्त्री जी का मन उसकी बातें सुन कर पिघल जाता है, आँखों में आँसू आ जाते हैं:

और वे उसका कन्धा थपथपा कर उसे शान्त कराने के लिए/ आँसू पोंछते हैं। इतने में ही सामने से मणि गोदी में बच्चे को उठाए अपने भाई के साथ वहाँ सबके बीच पहुँच जाती है। सभी उसे इस तरह अचानक आया देखकर हैरान रह जाते है।]

शास्त्री : अरे बेटी मणि, तू ! तू कैसे चली आई इस तरह सवेरे-सवेरे अचानक ?

मणि : पिताजी, आप कल सुबह जब घर से आए थे तो यह कहकर आए थे न कि मैं शाम तक जरूर इनका हाल पता करके लौट आऊँगा। कल से देर रात तक हम सब आपका इन्तजार करते रहे। जब आप नहीं आए तो मेरा दिल बहुत घबरा उठा कि न जाने वहाँ क्या बात है, क्या हो गया है, कैसी बीमारी है जो आपको रुकना पड़ा। सुबह जब मेरा दिल न माना तो घनश्याम भाई को साथ लेकर मैं स्वयं ही देखने चली आई। क्या बात है ? सब ठीक तो है न ? सब इस तरह क्यों खड़े हैं ?

[वह आगे बढ़कर सास-ससुर के पाँव छूने लगती है। वे बहुत खुश हो जाते हैं व बच्चे को पकड़ कर प्यार करते हैं। श्याम पास खड़े भैया-भाभी की तरफ बढ़ता है और हाथ जोड़ कर भर्राई आवाज में कहता है—]

श्याम : भैया-भाभी ! मुझे माफ कर दीजिए। मेरी वजह से आप दोनों इस तरह घर छोड़ कर न जाइए। यह घर आपका है, आपकी वजह से ही आबाद है। आप इस तरह छोड़कर जाएँगे तो यह टूट जाएगा, बिखर जाएगा। (रो पड़ता है) ऐसा ही कहते हैं न भैया

आप सबको, औरों को ! फिर आप क्यो जा रहे हैं ! जाना तो मुझे चाहिए, मैं जाऊँगा। मैं ही इस घर के लायक नही, मैं आप सब लोगो के बीच रहने लायक नही हूँ। मैं चला जाऊँगा तो घर का सुख-चैन कायम रहेगा, कोई अशान्ति वाली बात नही होगी। मैंने अपनी देवी जैसी भाभी के साथ भी दुर्व्यवहार किया। मैं नीच हूँ। मुझे दण्ड क्यो नही देते थे आप? क्यों सहन करते रहे मेरी हर बुराई, दुराचार व जुल्म को ? आप सब बडे थे मुझसे, सब समझदार, क्यों नहीं मुझे जबरदस्ती रोका गलत रास्ते पर जाने से ? मैं गलत लोगों के कहने से अपने लोगो पर अपने घर पर जुल्म करता रहा, मैं अत्याचार करता रहा और आप सब मुझे छोटा समझकर माफ करते रहे, सहन करते रहे। दण्ड दिया होता मुझे, तो कम से कम आज मैं इस तरह अपनी ही नजरो में गिरता। आज पहली बार जब मुझे अपनी गलतियों का अहसास हुआ तब यह महसूस कर रहा हूँ कि मैं किस हद तक अपने आचरण में गिर गया था। मैं सचमुच अब आप किसी से भी नजरें नही मिला सकता और आपके बीच इतनी ग्लानि और शर्मिन्दगी के साथ नही रह सकता। मुझे चले ही जाना चाहिए। यही मेरा दण्ड है। (सबकी ओर मुड़कर हाथ जोड़कर) अच्छा ! हो सके तो मुझे माफ कर देना आप सब। (जल्दी से लम्बे-लम्बे कदम भरकर जाने लगता है।)

[मणि हक्की-बक्की होकर सब कुछ देख रही है। उसे कुछ समझ नही आता। श्याम को इस तरह जाता देखकर शान्ति उसे आवाज देकर रोकने की कोशिश करता है, मगर

वह पीछे नहीं देखता, आगे बढ़ता जाता है।]

सुशीला : (पति से) जाइए न, आप रोकिए, देवर जी चले जा रहे हैं।

शान्ति : (आवाज लगाता है, बाकी सारे उधर देखते हैं) श्याम, श्याम, मत जा, लौट आ। मैं कह रहा हूँ लौट आ…।

सुशीला : (पति से) वह आगे बढ़ते जा रहे हैं और आप यहीं खड़े होकर आवाजें दे रहे हो, आगे बढ़ कर रोकिए न!

[शान्ति सोचने लगता है कि जाऊँ या न जाऊँ! शान्ति को इस तरह खोए हुए देखकर सुशीला स्वयं ही उसके पीछे जल्दी-जल्दी जाती है।]

सुशीला : देवर जी, रुक जाइए, मत जाइए आगे। आपको मेरी कसम।

श्याम : (उसकी आवाज सुनकर ठिठक जाता है और कहता है) नहीं भाभी, आप लौट जाइए। मुझे जाने दीजिए। इसी में सबका भला है।

सुशीला : नहीं। आपको अपने बेटे की कसम, लौट आइए।

[जैसे ही वह जल्दी-जल्दी उसकी तरफ बढ़ती है, उसका पैर खिसक जाता है और वह लड़खड़ा कर गिर पड़ती है। आवाज सुनकर श्याम पीछे मुड़कर देखता है। बाकी और कोई नहीं देख पाता। भाभी को गिरते हुए देखकर, भागकर पीछे लौटता है और सुशीला के करीब पहुँचकर उसे सहारा देकर उठाता है।]

श्याम : कहीं चोट तो नहीं लगी भाभी ?

[भाभी के ऐसे निश्छल आग्रह को देखकर श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है और आँखें छलछला जाती हैं।]

सुशीला : (उठते हुए) नही। मगर मैं तभी उठूंगी, अगर तुम घर चलोगे। चलोगे न?

श्याम : (ऊँची आवाज में उसे उठाते हुए) हाँ चलूँगा। आओ।

[दोनो आहिस्ता-आहिस्ता वापिस आते हैं। सबकी नजरें उन पर है।]

सुशीला : देवर जी, आप घर छोड़कर कहाँ जा रहे हो ? गलती तो हर इन्सान से होती है। गलती को मान लेना ही सबसे बड़ा प्रायश्चित्त है। सबने आपको माफ कर दिया है। फिर क्यों अब आप स्वयं को दण्ड देने जा रहे हो !

श्याम : आप सब तो सचमुच देवता हैं, जिन्होंने मुझ जैसे अपराधी को माफ कर दिया।

[इतने में दोनों आँगन में पहुँच जाते हैं। सब खुश हो जाते है।]

सुशीला : (शरारत से) हाँ, बाकी तो सबने माफ कर दिया देवर जी को, मणि का पता नही उसको पूछ लीजिए आप स्वयं देवर जी।

[श्याम मणि के करीब जाकर हाथ जोड़कर कहता है।]

श्याम : मणि, मैं गुनाहगार हूँ तुम्हारा, मुझे माफ कर सकोगी ?

[मणि सबके सामने इस तरह पति को हाथ जोड़े खड़े देखकर शरमा जाती है।]

मणि : यह क्या कहते हैं आप ! लीजिए···

[मुन्ने को श्याम की गोद मे पकडा देती है। श्याम बच्चे को प्यार से चूमता है। सभी बहुत खुश होते हैं।]

श्याम : (बच्चे से) तू अपने बाप की तरह न बनना मेरे लाल !

